Sanskrit Translation of Selected Shabdas from Sarbachan (Poetry)

सारबचन पेज 219-220 ॥ शब्द छठवाँ ॥ शब्द की करो कमाई दम दम	
हिन्दी	संस्कृत
शब्द की करो कमाई दम दम । शब्द सा और न कोई हमदम ॥ १ ॥	उत्साहेन कुर्यात् शब्दस्य अर्जनम्। शब्दवत् मित्रं नान्य: कश्चित् ॥ १ ॥
शब्द को सुनो बंद कर सरवन । शब्द की गहो जाय धुन झमझम ॥ २ ॥	श्रूयात् शब्दं कर्णौ पिधाय । गृह्णीयात् शब्दस्य झमझमेति ध्वनिम् ॥ २ ॥
शब्द तेरी दूर करे सब हमहम । शब्द को पाय गहो वहाँ समसम ॥ ३ ॥	शब्देन दूरी भवति अहंकार: सर्वविधे:। प्राप्य शब्दं भूयाद् एकरस: तत्र ॥ ३ ॥
देखियो जोति उजाला चमचम । रहो फिर धुन में छिन छिन रम रम ॥ ४ ॥	पश्येत् ज्योते: देदीप्यमानं आलोकम् । प्रतिक्षणं ध्वनौ रमेत् ततः ॥ ४ ॥
भोग सब त्यागे हुआ मन उपसम । सुनी अब चढ़ कर धुन जहाँ घम घम ॥ ५ ॥	त्यक्ता: सर्वे भोगाः जातः मनः शान्त:। श्रुतः यत्र घमघमेति ध्वनिः आरुह्य अधुना ॥ ५ ॥
कहें गुरु रह तू उसमें जम जम । बहर सुन पाई एक धुन बम बम ॥ ६ ॥	कथयन्ति गुरुः त्वं स्थिरं भव तस्मिन् । पुनः: श्रुत: एक: बमबम इति ध्वनि: ॥ ६ ॥
सुरत फिर चढ़ी वहाँ से धम धम । सुन्न में पहुँची लई धुन छम छम ॥ ७ ॥	तत्रतः पुनः अरोहत् आत्मा धमधम इति ध्वनौ । सुन्नपदे गत: गृहीतः छमछम इति ध्वनिः ॥ ७ ॥
और भी सुनी एक धुन खम खम कहूँ क्या महिमा शब्द अगम गम ॥ ८ ॥	अपि च श्रुतः एकः खमखम इति ध्वनिः । किं वच्मि शब्दस्य अपरापारं महिमाम् ॥ ८ ॥
करूँ मैं जितनी ही सब कम कम । खोल कस कहूँ बात यह मुबहम ॥ ९ ॥	अल्पैव यावद् वर्णयेयम् । कथं प्रत्यक्षी करोमि गुप्तोऽयं वचनम् ॥ ९ ॥
सुरत को मिली अधर की गम गम । पिया सँग बैठी करत परम रम ॥ १० ॥	आप्नोत् आत्मा अधरपदस्य लब्धि:। असीदत् प्रियेण सह करोति परं विलसनम् ॥ १० ॥
मिटा सब घट का अबही तम तम । बरसने लगीं झड़ियाँ रिमझिम ॥ ११ ॥	अधुना अनश्यत् घटस्य गहन: तमः । वर्षन्ति जलबिन्दवः धारारूपे ॥ ११ ॥
तेज अब फैला घट में इम इम । अमीरस चुआ चुए ज्यों शबनम ॥ १२ ॥	तेजः प्रसारितः घटे एवम् । अस्यन्दत अमृतरस: अवश्याय इव ॥ १२ ॥
हुआ मन सभी जतन से बरहम । सुरत के लागी अब धुन मरहम ॥ १३ ॥	विमुख: जात: मन: सर्वेभ्य: यत्नेभ्य: । सम्प्रति आत्मन: अलगत् ध्वनिलेपनम् ॥ १३ ॥
गुरू पर तन मन करूँ समर्पन । कहें अस राधास्वामी बचन दमादम] ॥ १४ ॥	समर्पयामि तनुमनसी गुरौ। वदन्ति वचनम् इदं पुन: पुन: रा धा/ध: स्व आ मी प्रिया: ॥ १४ ॥

सारबचन पेज 220-221 ॥ शब्द सातवाँ || शब्द सँग बाँध सुरत का ठाट	
हिन्दी	संस्कृत
शब्द सँग बाँध सुरत का ठाट । बहे मत जग का चौड़ा फाट॥ १ ॥	शब्देन सह बधस्व आत्मनः उडुपम् । मा प्रवह पृथु: पाट: जगतः ॥ १ ॥
शब्द बिन मिले ना घर की बाट । शब्द का परखो घट में घाट ॥ २ ॥	शब्दं विना न प्राप्यते निजगृहस्य मार्गः। निरीक्षस्व शब्दस्य स्थानं घटे ॥ २ ॥
शब्द सँग बाँधो ऐसा ठाट । बहुर तुम सोवो बिछाये खाट ॥ ३ ॥	स्थापय ईदृशं सम्बन्धं शब्देन सह । शेष्व निश्चिन्तीभूय अनन्तरम् ॥ ३ ॥
गगन चढ़ शब्द अमीरस चाट । शब्द बिन और न सूधी बाट ॥ ४ ॥	आरुहय गगनं स्वादस्व शब्दामृतरसम् । नान्यः ऋजुमार्गः शब्दं विना ॥ ४ ॥
शब्द सँग भर लो मन का माट । शब्द ही करे करम का काट ॥ ५ ॥	पूरय मनसः घटं शब्देन सह । कृन्तति शब्दैव कर्म ॥ ५ ॥
शब्द बिन हो गई बारहबाट । शब्द सँग जग से रही उचाट ॥ ६ ॥	शब्दं विना नष्टं भ्रष्टं सर्वम् । शब्देन साकं शिथिला जाता जगतः ॥ ६ ॥
शब्द ही खोले बज्र कपाट । शब्द सँग झाँका चौक सपाट ॥ ७ ॥	शब्दैव उद्घाटयति वज्रकपाटम् । निरीक्षितं समस्थलं शब्दाश्रयेण ॥ ७ ॥
शब्द की करो सदा तुम छाँट । शब्द रस पीवो और दो बाँट ॥ ८ ॥	कुरु शब्दस्य अभिज्ञानं सदैव । पिब शब्दरसं कुरु वितरणं च ॥ ८ ॥
काल की ठोको फिर तुम टाँट । शब्द सँग रहे न कोई आँट ॥ ९॥	प्रताडय कालस्य कपालं पुनः । न भवेत् कोऽपि बैरं शब्देन सह ॥ ९ ॥
राधास्वामी कहते मार कुटाँट । शब्द ही खोलै घट का साँट ॥ १० ॥	रा धा/ध: स्व आ मी प्रिया: कथयन्ति आहवानं कृत्य । शब्दैव उद्घाटयति घटस्यग्रन्थिम् ॥ १० ॥

सारबचन पेज 222-223 ॥ शब्द आठवाँ ॥ सुरत अब शब्द माहिं नित भरना	
हिंदी	संस्कृत
सुरत अब शब्द माहिं नित भरना । करो यह काम और नहिं करना ॥१॥	अधुना आत्मानं शब्दे प्रविशेत् नित्यम् । कुरु इदं कार्यं नान्यः किमपि कुर्यात् ॥१॥
गगन में देखो कँवल चमकना । दृष्टि पर देखो जोति दमकना ॥२॥	पश्य गगने देदीप्यमानं कमलम् । दृष्टौ पश्य प्रकाशमयीशोभाम् ॥२॥
सुरत मन वहाँ से अधर उलटना । घाट सुखमन का खोल पलटना ॥३॥	आत्मामनसी घटे प्रत्यावर्तेयातां तत्रतः । सुषुम्नानाड्याः मार्गम् अनावृत्य प्रत्यावर्तेत अन्तसि ॥३॥
इड़ा तज पिंगला घाटी चढ़ना । तान कर सूरत आगे बढ़ना ॥४॥	इडां त्यक्त्वा पिंगला उपत्यकाम् आरुहयात् । तनुनं कृत्य आत्मानं अग्रे वर्धेत ॥४॥
पकड़ धुन जाय धुनी से लगना । मान मद त्याग भर्म सब तजना ॥५॥	ग्राहय ध्वनिं शब्दस्रोतेन सह युञ्जीत् । मानमदौ त्यक्त्वा सर्वभ्रमान् त्यजेत् ॥५॥
गुमठ का खेल अजायब तकना । ओंग धुन पाई सुनी गरजना ॥६॥	पश्येत् गोलपटलस्य अद्भुतं खेलम् । प्राप्तः ओमध्वनिः श्रुतं गर्जनम् ॥६॥
सुन्न में पहुँची सरबर तटना । हंस होय निस दिन मोती चुगना ॥७॥	सुन्नपदे प्राप्तः मानसरतटे । चञ्चवाचयनं कुर्यात् मुक्ताः हंसरूपे प्रतिदिनम् ॥७॥
सुरत को मिला धाम यह अपना । मगन होय बैठी अब नहिं हटना ॥८॥	आत्मा प्राप्तवान् निजधामम् अयम् । मग्नं भूत्वा अनिषीदत् न अपसरति इदानीम् ॥८॥
अमीरस वहाँ का नित ही चखना । मौज राधास्वामी यही निरखना ॥९॥	अधुना नित्यास्वादनं कुर्यात् अमृतरसं तत्र । निरीक्षेत आनन्दक्रीडां रा धा/धः स्व आ मी दयालूनाम् इयमेव ॥९॥

सारबचन पेज 223-225 ॥ शब्द नवाँ ॥ धुन सुन कर मन समझाई	
हिंदी	संस्कृत
धुन सुन कर मन समझाई ॥टेक॥	ध्वनिं श्रुत्वा अवबुद्धं मनः ॥टेक॥
कोटि जतन से यह नहिं माने । धुन सुन कर मन समझाई ॥१॥	न मन्यते इदं कोटियत्नैः । ध्वनिं श्रुत्वा अवबुद्धं मनः ॥१॥
जोगी जुक्ति कमावें अपनी । ज्ञानी ज्ञान कराई ॥२॥	योगिनः अर्जयन्ति स्व युक्तिम् । ज्ञानिनः कारयन्ति ज्ञानम् ॥२॥
तपसी तप कर थाक रहे हैं । जती रहे जत लाई ॥३॥	तपस्विनः श्रान्ताः तपसा । यतय: यतन्ते ॥३॥
ध्यानी ध्यान मानसी लावें । वह भी धक्का खाई ॥४॥	ध्यानिनः मानसध्याने युक्ताः । आघातिता: तेऽपि ॥४॥
पंडित पढ़ पढ़ बेद बखानें । बिद्या बल सब जाई ॥५॥	पण्डिता: पाठं पाठं वर्णयन्ति वेदम् । सर्वं व्यर्थं विद्याबलात् ॥५॥
बुद्धि चतुरता काम न आवे । आलिम रहे पछताई ॥६॥	निष्प्रयोजनौ ज्ञानं-चातुर्यञ्च । विद्वांसः कुर्वन्ति पश्चात्तापम् ॥६॥
और अमल का दख़ल नहीं है । अमल शब्द लौ लाई ॥७॥	अमान्याः अन्ये साधनानि । शब्दसाधनया तल्लीनः ॥७॥
गुरू मिले जब धुन का भेदी । शिष्य बिरह धर आई ॥८॥	यदा प्राप्यते ध्वने: मर्मज्ञः गुरुः । विरहं धार्य आगच्छति शिष्य: ॥८॥
सुरत शब्द की होय कमाई । तन मन कुछ ठहराई ॥९॥	भवेत् सुरतशब्दस्य अर्जनम् । किञ्चित् स्थिरं भवति मनः तदा ॥९॥
हिर्स हवस से हाथ न आवे । तन मन देव चढ़ाई ॥१०॥	अप्राप्यम् अनुकरणपूर्वकम् इच्छया लोभेने च । कुरु समर्पणं तनुमनसोः ॥१०॥
बुलहवसी और कपटी जन को । नेक न धुन पतियाई ॥११॥	विषयी कपटी च जन: । न श्रृणोति ध्वनिम् अल्पमपि॥११॥
यह धुन है धुर लोक अधर की । कोइ पकड़ें संत सिपाही ॥१२॥	अयं ध्वनि: सर्वोच्चलोकस्य । श्रृणोति कोऽपि शूरसन्तः ॥१२॥
मन को मार करें असवारी । गगन कोट वह लेयँ घिराई ॥१३॥	निरुध्य मनः अधिरोहति ऊर्ध्वम् । परक्राम्यन्ति ते गगनदुर्गम् ॥१३॥
खाई सुन्न पार मैदाना । महासुन्न नाका परमाना ॥१४॥	सुन्नपदस्य परिखाया: परे विद्यते क्षेत्रम् । सीमा महासुन्नप्रवेशद्वारस्य ॥१४॥
भँवरगुफा का फाटक तोड़ा । शीशमहल सतगुरु दिखलाई ॥१५॥	अत्रोटयत् भँवरगुहायाः द्वारम् । अदर्शयत् प्रकाशमानं सत्तलोकं सद्गुरु: ॥१५॥
अद्भुत लीला अजब वहाँ की । किरन किरन सूरज दरसाई ॥१६॥	अद्भुतलीला विचित्रस्थलस्य तस्य । प्रतिकिरणं दृष्ट: सूर्यः ॥१६॥

सूरज सूरज जोति निरारी । चन्द्र चन्द्र कोटिन छबि छाई ॥१७॥	अद्भुतज्योति: प्रतिसूर्यम्। कोटि: कोटि: शोभा प्रतिचन्द्रम्॥१७॥
घट अकाश औघट परकाशा । लख अकाश कोटिन परसाई ॥१८॥	प्रचण्डप्रकाश: घटाकाशे । पश्य आकाशं कोटिशः स्पर्शनम् ॥१८॥
यह लीला कुछ अजब पेच की । उलट पलट कोइ गुरुमुख पाई ॥१९॥	लीलेयम् अद्भुतभेदस्य । निरीक्ष्य आप्नोति गुरुमुखः कोऽपि ॥१९॥
कहाँ लग बरनूँ भेद अगाधा । जो कोइ लावे सुन्न समाधा ॥२०॥	कियत् पर्यन्तं वर्णयेयं अगाध भेदोऽयम् । उपविशति यो कोऽपि सुन्नसमाधौ ॥२०॥
समझ बूझ गूँगे गुड़ खाई । अकथ अकह की बात निराली क्योंकर कहूँ बनाई ॥२१॥	मूकः गुडम् भक्षति बोधपूर्वकम् । अकथनीयम् असाधारणम् वचनम् कथं कथयेयम् ॥२१॥
राधास्वामी राज़ छिपे को । परघट कर सरसाई ॥२२॥	रा धा/धः स्व आ मी दयालवः गुप्तभेदम् । प्रकटं कृतवन्तः ॥२२॥

सारबचन पेज 225-226 ॥ शब्द दसवाँ ॥ अनहद बाजे बजे गगन में	
हिंदी	संस्कृत
अनहद बाजे बजे गगन में । सुन सुन मगन होत अब मन में ॥१॥	गगने नदन्ति अनाहतवाद्याः । श्रावं श्रावं मग्नः भवति मनसि अधुना ॥१॥
गुरू सुनावें यह धुन तन में । सुरत लगा तू भी अब घन में ॥२॥	गुरुः श्रावयति एनं धुनं तनौ । युङ्क्ष्व त्वमपि आत्मानं घने ॥२॥
मार सिंह को चढ़ी इस बन में । शब्द मिला अब जुगन जुगन में ॥३॥	निहत्य मनः अरोहत् अस्मिन् उपवने । अनेकयुगानन्तरं प्राप्तः शब्द अधुना॥३॥
सुरत लगाई उसी लगन में । धुन जागी अब रगन रगन में ॥४॥	अयुङ्क्त आत्मा तस्मिन्नेव शब्दे । अजागः ध्वनिः प्रतिनाडीम् अधुना ॥४॥
सुन सुन शब्द गई सुन धुन में । दूर किये सब भूत और जिन में ॥५॥	श्रावं श्रावं शब्दं गतः सुन्नपदस्य ध्वनौ । अपसारिताः मया सर्वे कामक्रोधादयः ॥५॥
सुरत न आवे अब कभी इन में । शब्द मिला गुरु दिया अपन में ॥६॥	आत्मा न प्रत्यागच्छति अधुना एतेषु कदापि । प्राप्तः शब्दः दत्तवान् गुरुः घटे ॥६॥
शब्द प्रताप मिटाई तपन में । जाग उठी जग देख सुपन में ॥७॥	शब्दप्रतापेन अपसृतः कष्टः मया । जगत् स्वप्नं मत्वा अजागः ॥७॥
शब्द सुनूँ नित इसी भवन में । छिन छिन पकड़ूँ यही जतन मैं ॥८॥	अस्मिन्नेव घटे नित्यं शब्दं श्रृणोमि। प्रतिक्षणं स्वीकरोमि इमं उपायम् ॥८॥
अन्तर पाऊँ शब्द रतन मैं । शब्द शब्द सँग करूँ गवन मैं ॥९॥	घटेऽहम् शब्दरत्नं प्राप्नोमि । प्रतिशब्दम् अहं चलामि॥९॥
शब्द गहूँ अब मार मदन मैं । राधास्वामी कहैं पुकार सबन में ॥१०॥	गृहणे शब्दं सम्प्रति हत्वा कामम् । कथयन्ति राधास्वामी दयालवः प्रत्यक्षरूपेण ॥१०॥

सारबचन पेज 227-231 ॥ बचन दसवाँ ॥ निर्णय शब्द अथवा नाम का ॥ शब्द पहला ॥ रेखता ॥ नाम निर्णय करूँ भाई	
हिंदी	संस्कृत
नाम निर्णय करूँ भाई । दुधाबिधि भेद बतलाई ॥१॥	भ्राता करोमि निर्णयं नाम्नः । द्वौ भेदौ वर्णितौ ॥१॥
बर्ण धुन आत्मक गाऊँ । दोऊ का भेद दरसाऊँ ॥२॥	गायामि वर्णात्मकं ध्वन्यात्मकञ्च । द्वयो: भेदं दर्शयामि ॥२॥
बर्ण कहु चाहे कहु अक्षर । जो बोला जाय रसना कर ॥३॥	कथयेत् वर्ण: अक्षरं वा । उच्यते रसनया यः ॥३॥
लिखन और पढ़न में आया । उसे बर्णात्मक गाया ॥४॥	यं लिखितुं पठितुं वा शक्यते । तं वर्णात्मक इति अगायत् ॥४॥
लखायक है यही धुन का । बिना गुरु फल नहीं किनका ॥५॥	अयमेव बोधयति ध्वनिम् । गुरुं विना नाल्पमपि फलम् ॥५॥
मिलें गुरु नाम धुन भेदी । सुरत धुन धुनी सँग बेधी ॥६॥	नाम्न: ध्वनेः मर्मज्ञः च गुरुः प्राप्यते यदा । आत्मा ध्वनिना ध्वनेः मूलेन च सह युज्यते ॥६॥
एकता नाम और नामी । करावें जो मिलें स्वामी ॥७॥	नाम नाम्न: मूलस्य च मध्ये ऐक्यम् । कारयन्ति पूर्णगुरु: चेद् प्राप्यते ॥७॥
नाम बर्णात्मक गाया । नामी धुनआत्मक पाया ॥८॥	अगायत् वर्णात्मकं नाम। प्राप्तं ध्वन्यात्मकं मूलं नाम्नः ॥८॥
बर्ण से सुरत मन माँजो । बहुर चढ़ गगन धुन साधो ॥९॥	आत्मानं मनश्च वर्णात्मकेन मार्जयेताम् । पुन: गगनामारुह्य ध्वन्यात्मकं साध्नोतु ॥९॥
धुनी धुन एक कर जानो । सुरत से शब्द पहिचानो ॥१०॥	ध्वने: मूलं ध्वनिञ्च एकीकृत्य जानातु । अभिजानातु शब्दं आत्मना ॥१०॥
शब्द और सुरत भये एका । नाम धुनआत्मक देखा ॥११॥	शब्दश्च आत्मा च अभवताम् एक: । अनुभूतं ध्वन्यात्मकं नाम ॥११॥
गुरू बिन और बिना करनी । मिले कस कहो यह रहनी ॥१२॥	बिना गुरुं शब्दाभ्यासं च । वदतु कथं प्राप्येत् अयम् आचारव्यवहार: ॥१२॥
चाह अनुराग जिस होई । भाग बड़ गुरुमुखी सोई ॥१३॥	यस्मिन् इच्छा प्रेम च भवति। सैव सौभाग्यशाली गुरुमुखः ॥१३॥
नाम नामी दोऊ गाया । अभेदी भेद समझाया ॥१४॥	नाम नाम्नः मूलं च द्वौ गीतौ । अभिन्नं भेदं बोधितवान् ॥१४॥
गुरू की मौज में सब कुछ । जिसे चाहें करें गुरुमुख ॥१५॥	सर्वं निर्भरं गुरोः आनन्दक्रीडायाम् । यं अमीप्सति करोति तं गुरुमुख: ॥१५॥
गुरू मुख होय तन धन से । करे फिर प्रीति निज मन से ॥१६॥	गुरुमुखं भूत्वा तनुना धनेन च । पुन: कुर्यात् प्रीति: निजमनसा ॥१६॥

लगे तब जाय सुन धुन से । गये तब तीन गुन तन से ॥१७॥	युज्यते सुन्नपदस्य ध्वनिना सह तदा । अनश्यन् त्रिगुणाः तस्य घटात् तदा ॥१७॥
बर्ण-धुन भेद दोउ बरना । वाच और लक्ष इन कहना ॥१८॥	वर्णात्मकं ध्वन्यात्मकश्च द्वौ भेदो वर्णितौ । वाच्यं च लक्ष्यं च एते भाषेताम् ॥१८॥
वाच बर्णात्मक जानो । लक्ष धुन धुनी पहिचानों ॥१९॥	जानीहि वर्णात्मकं वाच्यम् । लक्ष्यं (गुप्तं) ध्वनिम् तस्य मूलशक्तिम् च जानीहि ॥१९॥
बर्ण में भेष जग भूला । मर्म धुन संत कोइ तोला ॥२०॥	वर्णात्मकनाम्नि वेषधारी साध्वादयः जगत् च भ्रमिताः । ध्वनेः भेदं केनापि संतपुरुषेण ज्ञातः ॥२०॥
वर्ण जप जप पचें भेषी । मिले कुछ फल नहीं नेकी ॥२१॥	साध्वादयः वर्णात्मकं जापं जापं पचन्ति । स्तोकमपि फलम् नाप्नुवन्ति ते ॥२१॥
भेद धुन का नहीं पाया । नाम फल हाथ नहिं आया ॥२२॥	ध्वनेः भेदं न प्राप्तम् । नामजापस्य परिणामः न लब्धः ॥२२॥
जपें नित सहस और लाखा । खुले नहिं नेक उन आँखा ॥२३॥	जपन्ति सहस्रलक्षसंख्यापर्यन्तम् नित्यम् । नाल्पमपि सचेताः भवन्ति ते ॥२३॥
तिमिर संसार नहिं जावे । मोह मद काम भरमावे ॥२४॥	जगतः तिमिरं न नष्टं भवति । भ्रमन्ति मोहमदकामाः ॥२४॥
धुनी धुन भेद नहिं चीन्हा । सुरत और शब्द नहिं लीन्हा ॥२५॥	मूलशक्तिः ध्वनिश्च मध्ये भेदं न ज्ञातम् । आत्मा शब्दानन्दं च न स्वीकृतम् ॥२५॥
मिला नहिं गुरू धुनभेदी । लखावे धुन मिटे खेदी ॥२६॥	न प्राप्तवान् शब्दभेदी गुरुः । श्रावयति ध्वनिं नश्यति खेदम् ॥२६॥
काल ने बुद्धि उन छेदी । मुफ़्त नरदेह उन दे दी ॥२७॥	अच्छिनत् तेषां बुद्धिं कालेन । निर्मूल्यं नरदेहं व्यर्थीकृतं तैः ॥२७॥
दया कर संत गोहरावें । ज़रा नहिं चित्त में लावें ॥२८॥	दयां धार्य आहूवयन्ति सन्तपुरुषाः । न स्तोकमपि धारयन्ति ते चित्ते ॥२८॥
पाँच धुन भेद बतलावें । सुरत की राह दिखलावें ॥२९॥	पंच ध्वनीनां भेदं वर्णयन्ति । आत्मनः मार्गं दर्शयन्ति ॥२९॥
धुनों के नाम दरसावें । रूप अस्थान कह गावें ॥३०॥	ध्वनीनां नामानि दर्शयन्ति । ध्वनीनां उद्गमरूपं संकथ्य गायन्ति ॥३०॥
सुरत का जोग लखवावें । जीव नहिं कहन उन मानें ॥३१॥	सुरतशब्दयोगं वर्णयन्ति । नानुसरन्ति जीवाः तेषां वचनम् ॥३१॥
सुरत ले गगन चढ़वावें । पिंड में सार बतलावें ॥३२॥	आत्मानं गगने आरोहयन्ति । सारं वदन्ति पिण्डे ॥३२॥
चढ़े ब्रह्मंड तब परखे । सहसदल मध्य कुछ निरखे ॥३३॥	ब्रह्माण्डे आरुहयात् परीक्षेत तदा । सहस्रदलपदमध्ये निरीक्षेत किञ्चित् ॥३३॥
बंक चढ़ तिरकुटी धावे । सुन्न दस द्वार गति पावे ॥३४॥	आरुहय बंकपद धावति त्रिकुटीं प्रति । प्रविशति सुन्नपदस्य दशंद्वारे ॥३४॥

महासुन जाय हरखानी । भँवर में जा सुनी बानी ॥३५॥	हर्षित: महासुन्नपदं गत्वा । श्रुतवान् शब्दं गत्वा भँवरगुहाम् ॥३५॥
अमर पद मूल जा देखा । बीन धुन का मिला लेखा ॥३६॥	अमरपदे सृष्टेः मूलम् अपश्यत् । प्राप्ता अहितुण्डवाद्यध्वनेः गुणवत्ता॥३६॥
अलख और अगम भी पेखा । नाम का मूल अब देखा ॥३७॥	दृष्टौ अलखगमपदौ अपि । अधुना अपश्यत् नाम्नः आदिकारणम् ॥३७॥
कहूँ क्या खोल राधास्वामी । सैन यह समझ परमानी ॥३८॥	किं उद्घाटयामि रा धा/धः स्व आ मी-धाम विषये । जानीहि एनं संकेतं प्रमाणम् ॥३८॥

सारबचन पेज 231-233 ॥ शब्द दूसरा ॥ नाम रस चखा गुरू सँग सार	
हिंदी	संस्कृत
नाम रस चखा गुरू सँग सार । काम रस छोड़ा देख असार ॥१॥	नाम्नः रससारं गुरुणा सह अस्वादत् । कामरसं सारहीनं मत्वा अत्यजत्॥१॥
नाम रँग रँगी सुरत मन मार । क्रोध को जारा छिमा सम्हार ॥२॥	नाम्न: रंगे रिंगित: आत्मा निरुध्य मन: । अप्रज्वालयत् क्रोधं धार्य क्षमाम् ॥२॥
नाम का मिला आज भंडार । लोभ को टाला जान कँगार ॥३॥	प्राप्तवान् नाम्नः भाण्डागारम् अद्य । अटालयत् लोभं मत्वा अतिद्ररिद्रम् ॥३॥
नाम गति पाई चढ़ आकाश । मोह तम गया देख परकाश ॥४॥	नाम्न उच्चपदम् प्राप्तम् आरुहय गगनम् । मोहस्य तमः अपसृतः प्रकाशं दृष्ट्वा ॥४॥
नाम धन पाया गगन निहार । मगन होय बैठी तज अहंकार ॥५॥	नाम्नः धनं प्राप्तं अवलोक्य गगनम् । आस्त मग्नी भूय अहंकारं त्यक्त्वा ॥५॥
नाम धुन सुनी सुन्न दस द्वार । नाम पद मिला महासुन पार ॥६॥	श्रुत: शब्दध्वनिं सुन्नपददशंद्वारे । प्राप्तं नामपदं महासुन्नात् पारम् ॥६॥
सुरत लिया भँवरगुफा आधार । सोहं और बंसी सुनी पुकार ॥७॥	आत्मा गृहीत: आधार: भँवरगुहाया: । श्रुत: सोहंध्वनि: वेणोश्च आह्वानम् ॥७॥
पद चौथे चली नाम की लार । अलख में गई नाम को धार ॥८॥	चतुर्थपदं अचलत् नाम्ना सह । अलखपदं गतवान् धार्य नाम ॥८॥
अगम में पहुँची नाम सम्हार । मिला राधास्वामी नाम अगार ॥९॥	अगमपदं गतवान् विभृत्य नाम। सर्वाग्रे प्राप्त: रा धा/धः स्व आ मी धाम:(धाम)॥९॥
करो अब सतसँग जग को जार । होय घट भीतर नाम उजार ॥१०॥	अधुना प्रज्वल्य जगत् कुर्यात् सत्संगम्। भवेत् घटे नाम्न: प्रकाश: ॥१०॥
मान मद बैठे दोनों हार । नाम पद हूई सुरत गलहार ॥११॥	आसातां मानमदौ द्वौ पराजितं भूत्वा । आत्मा नामपदेन सह अमिलत्॥११॥
भेद यह गावें संत पुकार । भेष नहिं मानें बड़े गँवार ॥१२॥	कृत्वा आह्वानम् गायन्ति सन्तपुरुषाः इमं भेदम् । न मानन्ति भेषधारकाः साध्वादयः अतिनीचा: ॥१२॥
रहे पंडित और जोगी वार । ज्ञान कर ज्ञानी मानी हार ॥१३॥	पण्डिताः योगिनश्च आसत अत्र भवसागरे । ज्ञानं प्राप्य ज्ञानिनः मानिनश्च पराजिताः ॥१३॥
संत कोइ पहुँचे अगम निहार । तोड़िया जिन जिन तिल का द्वार ॥१४॥	गतवान् विरल: सन्तपुरुष: अवलोक्य अगमपदम् । अत्रोटयत् य: य: षष्ठचक्रस्य द्वारम् ॥१४॥
नाम पद बरने देख बिचार । रहा नहिं धोखा खोला झाड़ ॥१५॥	वर्णितानि नामपदानि निरीक्ष्य । नावशिष्टं वञ्चनं अनावृतं सम्पूर्णम् ॥१५॥
नाम का परदा दिया उघाड़ । कहूँ मैं तुमसे कर अति प्यार ॥१६॥	उद्घाटिता नाम्नः जवनिका । वदामि त्वाम् अतिप्रेम्णा ॥१६॥
मिलें कोइ सतगुरु परम उदार ।	प्राप्येत् कोऽपि परमोदारः सद्गुरुः ।

करो यह करनी तुम निरवार ॥१७॥	त्वम् इदं कर्म मुक्तये कुरु ॥१७॥
पाओ तब नाम कुल्ल करतार । बाँध कर चढ़ो सुरत का तार ॥१८॥	प्राप्यात् तदा सर्वसृष्टेः कर्तुः नाम । आत्मना सह सम्बन्धं धार्य आरुहयात् ॥१८॥
मीन मत चढ़ गई उलटी धार । मकर गति पकड़ा अपना तार ॥१९॥	मत्स्य इव अरोहत् विपरीत धारया । ऊर्णनाभेः गतिइव अगृहणीत स्वतारम् ॥१९॥
काल अब थका पुकार पुकार । शरम कर बैठी माया नार ॥२०॥	काल आहवानं कृत्य कृत्य श्रान्तः अधुना । त्रपया आसत् मायानारी ॥२०॥
सुरत अब पाया निज घरबार । मिले राधास्वामी पुरुष अपार ॥२१॥	प्राप्तः आत्मा स्वस्थानम् इदानीम् । प्राप्तवन्तः रा धा/धः स्व आ मी अपारपुरुषाः ॥२१॥

सारबचन पेज 234-246 ॥ बचन ग्यारहवाँ ॥ सतसंग महिमा और भेद सत्तनाम का ॥ शब्द पहला ॥ कहाँ लग कहूँ कुटिलता मन की	
हिंदी	संस्कृत
कहाँ लग कहूँ कुटिलता मन की । कान न माने गुरु के बचन की ॥१॥	कियत् पर्यन्तं कथयामि कौटिल्यं मनसः । न धारयति मर्यादां गुरोः वचनस्य ॥१॥
प्रेम गया और भक्ति छिपानी । बैर ईर्षा की खुली खानी ॥२॥	गतः प्रेम तिरोभूता भक्तिश्च । बैरईर्ष्यायाश्च अप्रतिबन्धितं भाण्डागारम् ॥२॥
माया लाई छलबल अपना । काल दिया कलमल का ढकना ॥३॥	आनीतवती माया स्व छलं च बलं च । दत्तवान् काल: छादनं पापमलिनतायाः च ॥३॥
ज्ञान बुद्धि बल सतसँग भाई । छिमा मौज गुरु गई हिराई ॥४॥	भ्राता भवति सत्संगः ज्ञानबुद्धिश्च बलेन । लुप्ता जाता गुरोः क्षमा आनन्दक्रीडा च ॥४॥
देखो अचरज कहा न जाई । कलजुग का परभाव दिखाई ॥५॥	पश्य न कथितुं शक्यते आश्चर्यम् । दृश्यते कलयुगस्य प्रभावः ॥५॥
हैं गुरु बहिन और गुरु भाई । तिन में निसदिन होत लड़ाई ॥६॥	सन्ति गुरुभ्रातारः भगिन्यश्च । तेषु भवति कलहं प्रतिदिनम् ॥६॥
काल दाव अपना यों खेला । सतसँग में आय कीन्हों मेला ॥७॥	अखेलत् स्व चालं काल ईदृश:। कृतवान् मेलनम् आगत्य सत्सङ्गे ॥७॥
सेवा में घुसपैठ कराई । और तरह कोई घात न पाई ॥८॥	अकारयत् बलाद् अन्तः प्रवेशनं सेवायाम् । न प्राप्तवान् अन्य कमपि घातम् ॥८॥
सेवा में अस कीन्हा पेचा । मन को सब के धर धर खैंचा ॥९॥	ईदृशीयुक्तिः संलग्ना सेवायाम् । सर्वेषां मनांसि संगृह्य संगृह्य आकृष्टः ॥९॥
गुरु ताड़ें सतसंगी झींखें । काल लगाई ऐसी लीकें ॥१०॥	ताडयति गुरुः दुःखी भवन्ति सत्संगीजनाः । अयुनक् काल ईदृशी: रीतयः ॥१०॥
गुरु समझावें सीख न मानें । मनमति अपनी फिर फिर ठानें ॥११॥	गुरु अवबोधयति न मन्वते शिक्षाम् । निश्चयीकुर्वन्ति स्व मनमतिं पुनः पुनः ॥११॥
गुरु को देवें दोष लगाई । फिर फिर चौरासी भरमाई ॥१२॥	दोषारोपणं कुर्वन्ति गुरुम् । पुनर्पुनः भ्रमन्ति चतुरशीत्याम् ॥१२॥
इतने दिन सतसँग जो कीया । कुछ भी असर न उसका हूआ ॥१३॥	एतावत् दिवसपर्यन्तं कृतः सत्संगः यः । न जातः किमपि प्रभावः तस्य ॥१३॥
सतगुरु से अब करूँ पुकारा । काल मार मन लेव सुधारा ॥१४॥	इदानीं करोमि प्रार्थनां सद्गुरुम् । हत्वा कालं सुधारयेत् मनः ॥१४॥
तुम से काल ज़बर नहिं होई । काटो फंदा जम का सोई ॥१५॥	न त्वत् बलवत्तरः कालः । कृन्तेत् यमस्य पाशं तदेव ॥१५॥
तुम्हरे चरन प्रीति होय गाढ़ी । सतसँगियन मन शुधता बाढ़ी ॥१६॥	प्रगाढ़प्रीतिः भवेत् तव चरणयोः । वर्धते शुद्धता सत्संगीजनेषु ॥१६॥

हिल मिल कर सब करें अनंदा । द्रोह घात का काटो फंदा ॥१७॥	परस्पर प्रेम्णा एकत्रीभूय कुर्याम आनन्दं सर्वे । कृन्तेत् द्रोहघातस्य पाशम् ॥१७॥
सतसंगी सब मिल कर चालें । प्रीति परस्पर पल पल पालें ॥१८॥	चलेयुः सर्वे: सत्संगीजना: मिलित्वा । प्रतिपलं परस्परं प्रेमपूर्णं व्यवहारं कुर्यु: ॥१८॥
यही हुकुम अब सब को कीना । जो नहिं माने सो काल अधीना ॥१९॥	अयमस्ति आदेशः सर्वेभ्य: । न मनुते य: कालाधीन: सः ॥१९॥
जो कोइ माने हुकुम हमारा । पहुँचे वह सतगुरु दरबारा ॥२०॥	यो कोऽपि मनुते आदेशं अस्माकम् । गच्छति सः सद्गुरुसदनम् ॥२०॥
बुद्धि आपनी लेव सम्हारी । बचन गुरू यह मन में धारी ॥२१॥	सुधारयेत् स्व बुद्धिम् । एनं गुरुवचनं मनसि धारयेत् ॥२१॥
जिनके मन को काल सम्हारा । सो नहिं मानें बचन हमारा ॥२२॥	यस्य मनः कालस्यवशवर्ती । स: नानुसरति अस्माकं वचनम् ॥२२॥
अब मन में चिन्ता मत राखो । सत्तनाम अब छिन छिन भाखो ॥२३॥	मा धर चिन्तां मनसि अधुना । भज सत्तनाम प्रतिक्षणं इदानीम् ॥२३॥
दीन हीन जानो अपने को । निपट नीच मानो अपने को ॥२४॥	जानीहि दीनं हीनञ्च स्वकीयम् । मनुष्व नितान्तं निकृष्टं स्वकीयम् ॥२४॥
अब अहंकार करो क्या किस से । मौत धार दम दम में बरसे ॥२५॥	अधुना किं केन वा कुर्यात् अहंकारम् । वर्षति मृत्योः धारा तीव्रेण ॥२५॥
जैसे जग में महा भिखारी । दीन ग़रीबी उन सब धारी ॥२६॥	महाभिक्षुकः जगति यथा । धृता दीनता निर्धनता च तेन ॥२६॥
कोई उसको कुछ कह लेवे । मन को अपने ज़रा न देवे ॥२७॥	वदेत् किमपि अनावश्यकं कोऽपि तम् । न किञ्चिदपि विचारयति स्व मनसि ॥२७॥
तुम सतसँग कर क्या फल पाया । उनका सा भी मन न बनाया ॥२८॥	किं फलं प्राप्तं त्वया सत्सङ्गस्य । न कल्पितं मनः तत्सम: ॥२८॥
अब ऐसा तुम्हें करना चहिये । अपने मन आधीनी धरिये ॥२९॥	सम्प्रति करणीयं त्वया ईदृशम् । धरेत् दीनतां स्वमनसि ॥२९॥
हाहा खाओ चरन पखालो । आपस में तुम हिल मिल चालो ॥३०॥	याच क्षमां प्रक्षालय चरणौ । चल प्रेम्णा परस्परं त्वम् ॥३०॥
जो कोइ जिससे रूठे भाई । सोई तिसको लेय मनाई ॥३१॥	भ्राता यो कोऽपि रुष्टः भवेत् येन । सैव प्रसन्नं कुर्यात् तम् ॥३१॥
हाथ जोड़ बहु बिनती करे । करे खुशामद चरनन पड़े ॥३२॥	करौ बद्ध्वा याचनां कुर्यात् सः । कुर्यात् अनुनयं पतेत् चरणयो: ॥३२॥
इतने पर जो माने नाहीं । गुनहगार सतगुरु का भाई ॥३३॥	एतावत् करणेऽपि न मनुते यः । भ्राता अपराधी सद्गुरो: सः ॥३३॥
जलन ईर्षा जिस घट आई । वह दुख कैसे जाय नसाई ॥३४॥	ईर्ष्या मात्स् र्यञ्च आगतवन्तौ यस्मिन् घटे । कथं नश्येत् तद् दुःखम् ॥३४॥

कर बिबेक मन को समझावे । या सतगुरु की दया समावे ॥३५॥	बोधयेत् मनः धार्य विवेकम् । प्राप्नुयात् सद्गुरोः दयां वा ॥३५॥
सतगुरु दया बिना नहिं होई । बिन बिबेक नहिं जावे खोई ॥३६॥	असम्भवः सद्गुरोः दयां विना । विवेकं विना नापसरेत् निकृष्टता ॥३६॥
जो सतगुरु निज दया बिचारें । तब यह दुरमति मन से टारें ॥३७॥	स्वदयां कुर्यात् सद्गुरुः चेत्तर्हि । मनसः अपसारयेत् इमां कुबुद्धिम् तथा ॥३७॥
जो कोइ दीन कपट से होई । ता का रोग कहो कस जाई ॥३८॥	यो कोऽपि धारयति कपटपूर्णां दीनताम् । कथय कथं अपसरेत् तस्य व्याधिः ॥३८॥
कपटी को ऐसा अब चाही । करे सफ़ाई कपट नसाई ॥३९॥	धूर्तः कुर्यात् एतादृशम् आचरणम् । कुर्यात् शुद्धिं नश्येत् छलं च ॥३९॥
जो बल उसका पेश न जावे । तौ सतगुरु से बिनती लावे ॥४०॥	न लभेत् साफल्यं तस्य बलं चेद् । तर्हि कुर्यात् याचनां सद्गुरुम् ॥४०॥
खोले कपट न राखे परदा । गुरु से खोले रख रख सरधा ॥४१॥	उद्घाटयेत् कपटं नान्तर्दध्यात् । श्रद्धां धार्य उद्घाटयेत् गुरुसमक्षम् ॥४१॥
अपने औगुन उनसे भाखे । बार बार बिनती कर आखे ॥४२॥	कथयेत् स्वावगुणान् तम् । कथयेत् पुनर्पुनश्च याचनां कृत्वा ॥४२॥
हे स्वामी मेरी कपट निकारो । मैं बलहीन मोहिं तुम तारो ॥४३॥	हे स्वामिन् ! निष्कासयेत् मम कपटम् । बलहीनोऽहं निस्तारयेत् माम् ॥४३॥
तुम्हरी दया होय जब भारी । घट से निकसे कपट हमारी ॥४४॥	भूयादपारा दया यदा तव । घटात् निर्गच्छेत् नः छलम् ॥४४॥
और उपाय न इसका कोई । बिना दया कोइ जुक्ति न होई ॥४५॥	नान्योपायः अस्य कोऽपि । दयां विना नान्या युक्तिः ॥४५॥
मन कपटी घट घट में पैठा । सब जीवन का पकड़ा फेंटा ॥४६॥	धूर्तमनः प्रविष्टं प्रतिघटम् । गृहीतं कटिवस्त्रं सर्वजीवानाम् ॥४६॥
कर सतसँग भौ भाव बसावे । गुरु की दया कपट नस जावे ॥४७॥	कृत्वा सत्संगं गुरोः भयं श्रद्धां धरेत् । सद्गुरोः दयया नश्यति कपटम् ॥४७॥
जो गुरु आगे कपट न खोलै । निष्कपटी अपने को बोलै ॥४८॥	नोद्घाटयेत् स्वकपटं गुरुसमक्षं यः । वदति निष्कपटी स्वकीयम् ॥४८॥
दोहरा कपट लिये है सोई । उसका जतन कभी नहिं होई ॥४९॥	द्वितयः कपटेन युक्तः सः । तस्य यत्नं न भवति सफलं कदापि ॥४९॥
वह सतसँग के लायक़ नाहीं । वह असाध रोगी जग माहीं ॥५०॥	न योग्यः सः सत्संगकृते । असाध्यः रुग्णः सः जगति ॥५०॥
पर जो सतगुरु समरथ पावे और चरनन पर सीस नवावे ॥५१॥	परं यो प्राप्नोति समर्थं सद्गुरुम् । नमति शिरश्च चरणयोः ॥५१॥
पड़ा रहे सतसँग के माहीं । धीरे धीरे तौ छुट जाई ॥५२॥	वर्तते सत्संगे च । शनैः शनेः मुच्यते तदा ॥५२॥

सतसँग जल जो कोई पावे । सब मैलाई कट कट जावे ॥५३॥	यो कोऽपि प्राप्नोति सत्संगजलम् । प्रवहति सर्वं मालिन्यं शनैः शनैः ॥५३॥
सतसँग महिमा कहा बखानूँ । अस सम जतन और नहिं मानूँ ॥५४॥	किं कथयेयं सत्संगस्य महिमाम् । न मन्वे अस्य समं अन्ययत्नम् ॥५४॥
कलजुग ख़ास जतन कोइ नाहीं । बिन सतसंग संत नहिं गाई ॥५५॥	कलियुगे न कोऽपि विशिष्टः यत्नः । न वर्तेत सत्संगं विना कथितवन्त सन्तः ॥५५॥
कर्म धर्म तप पूजा दाना । इस करनी से नित बढ़े माना ॥५६॥	कर्मधर्मश्च तपपूजा च दानञ्च । अनया क्रियया वर्धते अहंकारः नित्यम् ॥५६॥
और ज्यों की त्यों होय न आवे । तौ फल उलटा उसका पावे ॥५७॥	कामनानुकूलं न भवेत् चेत् । विपरीतं फलं प्राप्यते तस्य ॥५७॥
याते संतन काढ़ि निकारी । सतसँग की महिमा कहि भारी ॥५८॥	अतः सन्तः अन्विष्टवन्तः । कथितवन्तः व्यापकं महिमां सत्संगस्य ॥५८॥
॥ दोहा ॥	
सतसँग किसको कहत हैं, सो भी तुम सुन लेव। सत्तनाम सतपुरुष का, जहाँ कीर्तन होय ॥५९॥	किं भवति सत्संगः, श्रणु तमपि त्वम् । सत्तनामसत्तपुरुषस्य च, भवति कीर्तनं यत्र ॥५९॥
चौथा पद सचखंड कहावे । महासुन्न के पार रहावे ॥६०॥	चतुर्थपदं सचखंड इति उच्यते । महासुन्नात् पारं विद्यते ॥६०॥
महासुन्न वह संतन भाखी । अक्षर से वह आगे ताकी ॥६१॥	सन्तः अभाषन्त तं महासुन्नपदम् । दृश्यते अक्षरपुरुषादग्रे तत् ॥६१॥
वह अक्षर है बेद को मूला । ज्यों का त्यों ताहि बेद न तोला ॥६२॥	अस्ति सः अक्षरपुरुषः वेदस्य मूलम् । वेदः न सम्यग् बोधितवान् तम् ॥६२॥
नेति नेति वाही को कहता । आगे की गति फिर कस लेता ॥६३॥	तम् अक्षरपुरुषं नेति नेति उदितः । तस्माद् अग्रे कथं अजानीत गतिम् ॥६३॥
बेद कतेब थके दोउ यहाँ ही । अक्षर सुन के वार रहाई ॥६४॥	वेद कुरानादयः श्रान्ताः अत्रैव । वर्तते अक्षरपुरुषः सुन्नात् पूर्वम् ॥६४॥
आगे का इन मर्म न जाना । संतन ने यह करी बखाना ॥६५॥	अग्रे किं रहस्यं नाजानन् एते । सन्तः वर्णितवन्तः एतम् ॥६५॥
जोगेश्वर बेदान्ती भाई । यह भी रहे अक्षर लख माहीं ॥६६॥	योगेश्वराः वेदान्तीभ्ाताराश्च। एतेऽपि ज्ञातवन्तः अक्षरस्य लक्ष्यस्वरूपम् ॥६६॥
सत्तनाम संतन जो भाखा । सत्तलोक संतन जहाँ आखा ॥६७॥	सन्तः यं सत्तनाम इति अभाषन्त । सन्तः यत्र सत्तलोक इति वर्णितवन्तः ॥६७॥
सो इन सब से आगे होई । बुद्धि से एक कहो मत कोई ॥६८॥	सोऽस्ति अग्रे एतेभ्यः सर्वेभ्यः । बौद्धिकज्ञानेन मा कथ एकार्थकः कोऽपि ॥६८॥
संतन साफ़ साफ़ कह डाला । मत बेदान्त काल कर जाला ॥६९॥	सन्तः अभाषन्त स्पष्टरूपेण । वेदान्तमतम् अस्ति कालस्य जालम् ॥६९॥
॥ दोहा ॥	

काल मता बेदान्त का, संतन कहा बनाय । सत्तनाम सतपुरुष का, भेद रहा अलगाय ॥७०॥	कालमतं वेदान्तस्य वर्णितवन्तः सन्तः । सत्तनाम सत्तपुरुषस्य वर्तते प्रथक् ॥७०॥
कुल्ल मते संसार के, सभी काल के जान । सत्तनाम सतपुरुष मत, यह दयाल पहिचान॥७१॥	संसारस्य सर्वाणि मतानि जानीत कालस्य । सत्तनाम सत्तपुरुषस्य मतम् अभिज्ञानं दयालोः मतस्य अयम्॥७१॥
सत्तनाम का भेद सुनाऊँ । वा की आदि अन्त दरसाऊँ ॥७२॥	श्रावयामि सत्तनाम्नः भेदम् । दर्शयामि तस्य आद्यन्तम् ॥७२॥
तब नहिं रचा अंड ब्रझंडा । तीन लोक और नहिं नौखंडा ॥७३॥	तदा न सृष्टौ अण्डब्रह्माण्डश्च । लोकत्रयः नवखण्डाश्च नासन् ॥७३॥
नहिं तब ब्रह्म नहीं तब आतम । नहिं तब पारब्रह्म परमातम ॥७४॥	तदा नास्तां ब्रह्मं च आत्मपदञ्च । तदा नास्तां पारब्रह्मं परमात्मा च ॥७४॥
नहिं तब देवी नहिं तब देवा । सुर नर मुनि कोइ रचे न सेवा ॥७५॥	तदा नासन् देवी देवाश्च । सुरनरमुनिषु न कोऽपि रचितः सेव्यः ॥७५॥
काल और महाकाल नहिं दोई । सुन्न और महासुन्न नहिं होई ॥७६॥	कालमहाकालौ नास्ताम् । सुन्नमहासुन्नौ नास्ताम् ॥७६॥
धरती गगन न बेद पुराना । कोइ सिद्धान्त बेदान्त न जाना ॥७७॥	नासन् धरा गगनं वेदपुराणाश्च । नाजानात् वेदान्तस्य सिद्धान्तं कोऽपि ॥७७॥
कहाँ लग कहू खोल कर भाई । किंचित् रचना नहिं प्रगटाई ॥७८॥	भ्राता कियत् पर्यन्तं कथयेयं स्पष्टं कृत्य । न किंचिदपि रचना प्रकटिता जाता ॥७८॥
तब रहे आप अनाम अमाया । अपने में रहे आप समाया ॥७९॥	आसीत् सः परमप्रभुः नामहीनः मायाहीनश्च । स्वस्मिन् अन्तर्भूतः स्वयम् ॥७९॥
मौज उठी एक धुन भई भारी । सत्तनाम सत शब्द पुकारी ॥८०॥	जाता आनन्दक्रीडा संजातः एकः तीव्रध्वनिः । प्रकटितः सत्तनाम सत्तशब्दः ॥८०॥
सच्चखंड इस धुन से रचिया । जहाँ लग मंडल धुन का बँधिया ॥८१॥	अनेन ध्वनिना रचितः सच्चखण्डः । यावत् पर्यन्तं परिधिः आसीत् ध्वनेः ॥८१॥
हंस रचे और दीप रचाये । सोलह सुत परघट होय आये ॥८२॥	रचितवन्तः हंसाः द्वीपाश्च असर्जयन् । प्रकटिताः जाताः षोडशकलाः ॥८२॥
सत्तलोक यों रचन रचानी । सत्तनाम महिमा निज ठानी ॥८३॥	एवं रचितः सत्तलोकः । निजमहिमानं निश्चयी कृतवान् सत्तलोकः ॥८३॥
जुग केते याही बिधि बीते । सत्तनाम रस सब मिल पीते ॥८४॥	अनेकानि युगानि व्यतीतानि एवम् । सर्वेमिलित्वा अकुर्वन् सत्तनाम्नः रसपानम् ॥८४॥
सत्य सत्य वहाँ रचा पसारा । फिर नीचे का किया बिस्तारा ॥८५॥	तत्रासीत् प्रसारः सत्यस्यैव । तदनन्तरं कृतं विस्तारणं अधः लोकानाम् ॥८५॥
एक धार वहाँ से चल आई । धार दूसरी आन समाई ॥८६॥	निर्गता एका धारा तस्मात् स्थलात् । असंविशत् द्वितीयाधारा आगत्य तस्याम्॥८६॥
सुन्न मँडल कीन्हा निज थाना । पुरुष प्रकिर्ति रचा अस्थाना ॥८७॥	गृहीतं सुन्नमण्डलं स्वस्थानम् । पुरुषप्रकृतिश्च मिलित्वा रचितं स्वस्थानम् ॥८७॥

जोति निरंजन संतन गाया । माया ब्रह्म वही ठहराया ॥८८॥	सन्त: गीतवन्तः ज्योतिनिरंजनं तम् । माया च ब्रह्मञ्च ते एव उक्तवन्तौ ॥८८॥
शिव शक्ती इस ही को कहते । केते जुग याही को बीते ॥८९॥	शिवश्च शक्तिश्च इमैव कथ्यते । अनेकानि युगानि व्यतीतानि एवम् ॥८९॥
ब्रह्मसृष्टि रचना इन ठानी । यह भी भेद न काहू जानी ॥९०॥	एते ब्रह्माण्डसृष्टे: निश्चयं कृतवन्तः । न कोऽपि जानाति भेदम् इमम् ॥९०॥
ब्रह्म हुआ जब इनसे न्यारा । सत्तनाम का ध्यान सम्हारा ॥९१॥	पृथग्भूतं ब्रह्म एतेभ्यः सर्वेभ्यः । सत्तनाम्नः ध्याने लीनं भूतम् ॥९१॥
माया ने फिर रचना ठानी । तीन पुत्र लीन्हें उतपानी ॥९२॥	तदा माया निश्चयी कृतवान् सृष्टिं रचितुम् । पुत्रत्रयः अजजन् सा ॥९२॥
नरसृष्टी इन से भई भारी । बेद रचे और कर्म पसारी ॥९३॥	एभ्यः संजाता बृहती नरसृष्टिः । रचिताः वेदाः अप्रसारयत् कर्मप्रपञ्चं च ॥९३॥
कर्मकांड में सब मन दीना । सुर नर मुनि भये काल अधीना ॥९४॥	सर्वे मनः अयुञ्जन् यज्ञादिकर्मकाण्डेषु । सुरनरमुनयः अभवन् कालाधीना: ॥९४॥
ज्ञानी जोगी पच पच हारे । कर्म भर्म से हुए न न्यारे ॥९५॥	ज्ञानिनः योगिनः संपच्य संपच्य पराजिताः । न पृथग्भूताः कर्मभ्रमेभ्यश्च ॥९५॥
सत्तपुरुष का भेद न जाना । बेदमते का बंधन ठाना ॥९६॥	नाजानन् रहस्यं सत्तपुरुषस्य । निश्चयी कृतवन्तः वेदमतस्य बन्धनम् ॥९६॥
संतमता इनसे बहु दूरी । यह क्यों जानें वह पद मूरी ॥९७॥	संतमत: एभ्य: अतिदूरम् । तं मूलपदं कथं जानीयु: ते ॥९७॥
याते संत संग अब कीजै । और संग सब परिहर दीजै ॥९८॥	अतः कुर्यादधुना सज्जनानां सङ्गतिम् । परित्यजेत् अन्येषां सङ्गतिम् ॥९८॥
सतसँग या का नाम कहावे । मिलें संत तब यह घर पावे ॥९९॥	अस्ति सत्सङ्ग अस्य नाम । सुयोगे संतपुरुषे प्राप्यते स्वगृहं तदायम् ॥९९॥
सत्तनाम धुन अब कहूँ खोली । बीन बाँसरी धुन जहाँ बोली ॥१००॥	अधुना उद्घाटयामि सत्तनामध्वनिम् । यत्र अनदत् अहितुंडवाद्यस्य वेणोश्च ध्वनिः ॥१००॥
काल नगर जहाँ अनहद बाजा । बाईं दिसा यह धुन उन साजा ॥१०१॥	कालनगर: यत्रास्ति अनहदशब्द: । वामदिशि सज्जितः अयं ध्वनि: स: ॥१०१॥
संतन की धुन इनसे न्यारी । पावेगा कोइ चढ़ पद चारी ॥१०२॥	अस्माद् पृथग् ध्वनिः संतपुरुषाणाम् । प्राप्स्यति कोऽपि आरुह्य चतुर्थपदम् ॥१०२॥
छाँटछूँट कर मैं सब गाई । संतमता सब दिया लखाई ॥१०३॥	अगायं संक्षेपणं कृत्वा सर्वम् । दर्शितं सर्वं सन्तमतम् ॥१०३॥
कहने में कुछ कसर न राखी । खुले दृष्टि तब देखै आँखी ॥१०४॥	न काऽऽपि न्यूनता जाता कथने । अनावृते चक्षुषो: पश्येत् स्वयम् ॥१०४॥
संत मेहर से कोइ कोइ पावे । बिना संत कुछ हाथ न आवे ॥१०५॥	विरलः जनः प्राप्नोति संतकृपया । विना सन्तपुरुषं न किमपि प्राप्तुं क्षम: ॥१०५॥

॥ दोहा ॥	
संत कही यह छानकर, मूरख माने नाहिं । बिना प्रीति परतीत के, कैसे पावे ठाहिं ॥१०६॥	अवदत् संतजन: चित्वायं न मनुते हतकः । विना प्रीतिंप्रतीतिञ्च कथमाप्नुयात् वासस्थानाम् ॥१०६॥
संतन से कर प्रीति अब, दृढ़ कर चित्त लगाय । कर्म भर्म सब छोड़कर, सूरत शब्द समाय॥१०७॥	इदानीं कुरु प्रीतिं संतजनै: सह दाढ् र्येन युक्त्वा चित्तम् । त्यक्त्वा सर्वकर्मभ्रमाः संविश आत्मानं शब्दे ॥१०७॥
राधास्वामी गाय कर जन्म सुफल करले । यही नाम निज नाम है, मन अपने धरले॥१०८॥	गीत्वा राधास्वामीनाम सफलं कुर्यात् जन्म । अयमेव निजनाम धरेत् स्व मनसि ॥१०८॥
भेद नाम का जब तू पावे । सतसँग में स्वामी के आवे ॥१०९॥	आप्नुया: नाम्नः भेदं यदा त्वम् । आगच्छे: स्वामिनः सत्संगे ॥१०९॥

सारबचन पेज 246-248 ॥ बचन बारहवाँ ॥ वर्णन महातम भक्ति का ॥ ॥ शब्द पहला ॥ भक्ति महातम सुन मेरे भाई	
हिंदी	संस्कृत
भक्ति महातम सुन मेरे भाई । सब संतन ने किया बखान ॥१॥	मम भ्राता शृणु भक्तेः महिमाम् । वर्णितवन्तः सर्वे सन्तः ॥१॥
यही मता गुरुमत पहिचानो । और मते सब झूठ भुलान ॥२॥	जानीहि एनं मतं गुरुमतम् । अन्यानि सर्वमतानि अनृते विस्मरन्ति ॥२॥
बिना भक्ति थोथे सब मानो । छिलका है मींगी की हान ॥३॥	भक्तिं विना सर्वं निःसारं मनुष्व । अस्ति शल्कं अभावः अष्टेः ॥३॥
ताते भक्ती दृढ़ कर पकड़ो । और सयानप तजो निदान ॥४॥	अतः गृहाण भक्तिं दाढर्येन । त्यज चातुर्यम् अन्यम् ॥४॥
भक्ती इश्क़ प्रेम यह तीनों । नाम भेद है रूप समान ॥५॥	भक्तिः च इश्कः च प्रेम च एतेषु त्रिषु । नाम्नः भेदः समरुपञ्च ॥५॥
भक्ति भाव यह गुरुमत जानो । और मते सब मनमत ठान ॥६॥	जानीहि गुरुमतं भक्तिं श्रद्धां च । जानीहि अन्यसर्वमतानि मनसः अनुकूलानि ॥६॥
प्रेम रूप आतम परमातम । भक्ति रूप सतनाम बखान ॥७॥	आत्मापरमात्मानौ प्रेमस्वरूपम् । ब्रूयात् सत्तनाम भक्तिस्वरूपम् ॥७॥
भक्ती और भगवंत एक हैं। प्रेम रूप तू सतगुरु जान ॥८॥	भक्तिः भगवान् च एकैव । जानीहि सद्गुरुं प्रेमरूपम् ॥८॥
प्रेम रूप तेरा भी भाई । सब जीवन को योंही मान ॥९॥	भ्राता तव रूपमपि प्रेमरूपम् । ईदृशं मनुष्व सर्वान् जीवान् ॥९॥
एक भेद यामें पहिचानो । कहीं बुंद कहिं लहर समान ॥१०॥	परिचिन्तय एकं भेदं अस्मिन् । कुत्रापि बिन्दुः कुत्रापि तरङ्गवत् ॥१०॥
कहीं सिंध सम करे प्रकाशा । कहीं सोत और पोत कहान ॥११॥	कुत्रापि सागर इव करोति प्रकाशम् । कुत्रापि ब्रूयात् भाण्डागारम् ॥११॥
कहिं इच्छा परबल होय बैठी । कहीं हुई माया बलवान ॥१२॥	कुत्रापि प्रबला जाता इच्छा । कुत्रापि जाता माया बलवती ॥१२॥
एक ठिकाने माया थोड़ी । सिंध प्रताप शुद्ध हुई आन ॥१३॥	एक स्थाने माया जाता अल्पा । आगत्य शुद्धा जाता सिन्धु प्रतापेन ॥१३॥
सोत पोत में माया नाहीं । वहाँ प्रेम ही प्रेम रहान ॥१४॥	नास्ति माया भाण्डागारे । तत्रास्ति प्रेमैव प्रेम ॥१४॥
वह भंडार प्रेम का भारी । जाका आदि न अन्त दिखान ॥१५॥	तद् बृहद् भाण्डागारं प्रेम्णः । यस्य न दृश्यते आद्यन्तम् ॥१५॥
बिना संत पहुँचे नहिं कोई । सतगुरु संत किया अस्थान ॥१६॥	विना संतं न कोऽपि गन्तुं क्षमः । संतसद्गुरुः कृतं स्थानम् ॥१६॥

प्रेम भक्ति की ऐसी महिमा । ग्रहण करो यह अमृत खान ॥१७॥	प्रेम्णः भक्तेश्च महिमा ईदृशी । गृहणीया: अमृतभाण्डागारम् इदम् ॥१७॥
ताते पहले करो भक्ति गुरु । पीछे पाओ नाम निशान ॥१८॥	अतः प्रथमं कुर्याद् गुरुभक्तिम् । ततः प्राप्नुयात् नाम्नः अभिज्ञानम् ॥१८॥
आरत कर कर गुरू रिझाओ । पाओ उनसे प्रेम निधान ॥१९॥	प्रसन्नं कुर्यात् गुरुं कृत्वा कृत्वा आरतिम् । प्राप्नुयात् तस्मात् प्रेमनिधानम् ॥१९॥
राधास्वामी कहत सुनाई । मिला तुझे अब भक्ती दान ॥२०॥	रा धा/धः स्व आ मी दयालवः ब्रुवन्ति । प्राप्तं भक्तिदानं त्वम् अधुना ॥२०॥

सारबचन पेज 249-251 ॥ शब्द दूसरा ॥ जक्त भाव भय लज्जा छोड़ो	
हिंदी	संस्कृत
जक्त भाव भय लज्जा छोड़ो । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥१॥	त्यज जगत: विचारं लज्जां च । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥१॥
जाति बरन भय लज्जा त्यागो । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥२॥	त्यज जाते: वर्णस्य च भयं लज्जाञ्च । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥२॥
शत्रु मित्र डर दूर हटाओ । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥३॥	अपसर शत्रुमित्रयो: भयं दूरम् । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥३॥
मात पिता डर छोड़ गँवाओ । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥४॥	पितरौ भयं त्यक्त्वा व्यर्थीं कुरु । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥४॥
जोरू लड़के मत डर इनसे । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥५॥	मा कुरु भयं पत्नी पुत्रेभ्यः च । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥५॥
भाई भतीजों का डर मत कर । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥६॥	मा कुरु भयं भ्रातृभ्य: भ्रातृपुत्रेभ्यश्च । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥६॥
सास ससुर डर मन से छोड़ो । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥७॥	मनसा परित्यज श्वश्रू: श्वसुरयो: भयम् । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥७॥
बहू जमाई इनका डर तज । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥८॥	पुत्रवधु: जामाता च एतयोः भयं त्यज । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥८॥
यार आशना सब डर छोड़ो । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥९॥	सुहृद् मित्रयोः सर्वं भयं त्यज । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥९॥
नातेदार कुटुम्बी जितने । इनका डर तज, कर भक्ती ॥१०॥	सम्बन्धी कुटुम्बी जना: च यावन् । त्यज एषां भयं कुरु भक्तिम् ॥१०॥
भक्ति अंग में जब तू बरते । छोड़ झिझक इन कर भक्ती ॥११॥	यदा व्यवहरे: त्वं भक्ति अङ्गे । त्यज संकोचं एषां त्वं कुरु भक्तिम् ॥११॥
जो मूरख हैं मर्म न जानें । इनका डर क्या, कर भक्ती ॥१२॥	मूढाः ये न जानन्ति रहस्यम् । किं भयं एभ्यः कुरु भक्तिम् ॥१२॥
इनका डर कुछ मत कर मन में । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥१३॥	मा कुरु एषां किञ्चिदपि भयं मनसि । प्रिय श्रृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥१३॥
भेष भेष को देख लजावे । सो भी कच्चा, कर भक्ती ॥१४॥	वेशधारी साध्वादीन् पश्य लजयति । सोऽपि अपक्वः कुरु भक्तिम् ॥१४॥
जब लग सबसे निडर न होवे । तब लग कच्चा, कर भक्ती ॥१५॥	यावत् पर्यन्तं न भवति भयहीनः सर्वेभ्य: । तावत् पर्यन्तं अपक्वः कुरु भक्तिम् ॥१५॥
ज़िल्लत इज़्ज़त जो कुछ होवे । मौज बिचारो कर भक्ती ॥१६॥	यो कोऽपि भवेत् निरादरः आदरश्च । चिन्तय प्रभोः इच्छां कुरु भक्तिम् ॥१६॥
गुरु का बल हिरदे धर अपने ।	गुरो: बलं धरतु स्व हृदये ।

सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥१७॥	प्रिय शृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥१७॥
यह बिगाड़ कुछ करें न तेरा । क्यों झिझके तू कर भक्ती ॥१८॥	न किञ्चिदपि विकारयन्ति ते तव । कथं करोषि संकोचं त्वं कुरु भक्तिम् ॥१८॥
बिना मौज गुरु कुछ नहिं होता । सुन प्यारे तू कर भक्ती ॥१९॥	न भवति किञ्चिदपि विना सद्गुरो इच्छा । प्रिय शृणु अनुपालय भक्तिं त्वम् ॥१९॥
तू कच्चा यह करे कचाई । और कहूँ क्या कर भक्ती ॥२०॥	अपक्वः त्वं करोषि अपरिपक्वताम् इमाम् । किं कथयेयं अन्यं कुरू भक्तिं त्वम् ॥२०॥
करते करते पक्का होगा । और उपाव न कर भक्ती ॥२१॥	कुर्वन् कुर्वन् परिपक्वः भविष्यसि । नान्योपायः कुरु भक्तिम् ॥२१॥
कच्ची से पक्की होय एक दिन । छोड़ कपट तू कर भक्ती ॥२२॥	भूयात् परिपक्वः अपरिपक्वाद् एकदिने । त्यज कपटं कुरु भक्तिं त्वम् ॥२२॥
कपट भक्ति कुछ काम न आवे । सच्ची कच्ची कर भक्ती ॥२३॥	न हितकारिका कपटभक्तिः । निर्मलं अशुद्धं वा कुरु भक्तिम् ॥२३॥
राधास्वामी कहत सुनाई । जैसी बने तैसी कर भक्ती ॥२४॥	कथयन्ति रा धा/धः स्व आ मी दयालवः । कुर्यात् भक्तिं यथासम्भवा ॥२४॥

सारबचन पेज 251-252 ॥ शब्द तीसरा ॥ धोखा मत खाना जग आय पियारे	
हिंदी	संस्कृत
धोखा मत खाना जग आय पियारे । धोखा मत खाना जग आय ॥१॥	प्रिय भव सुत्रातं वञ्चनात् आगत्य जगति । भव सुत्रातं वञ्चनात् आगत्य जगति ॥१॥
कोई मीत न जानो अपना । सब ठग बैठे फाँसी लाय ॥२॥	मा जानीहि कमपि स्व मित्रम् । सर्वे वञ्चका: आसते पाशनाय ॥२॥
जब सच्चा होय चले डगर गुरु । तबही चौंकें रोकें आय ॥३॥	यदा चलति सत्यपूर्वकं गुरो: मार्गे । तदा भवन्ति उद्वेजिता: अवरुन्धन्ति आगत्य ॥३॥
ऊँच नीच कहें बचन तोख के । मन को तेरे दें भरमाय ॥४॥	वदन्ति उच्चनिम्नव्यंग्यवचनानि । भ्रमन्ति तव मन: ॥४॥
इनसे रहना समझ बूझ कर । हैं यह बैरी हित दिखलाय ॥५॥	वसे: एतेभ्य: बोधपूर्वकम् । एते सन्ति शत्रव: दर्शयन्ति हितञ्च ॥५॥
तेरी हानि लाभ नहिं सोचें । अपने स्वारथ रहे लिपटाय ॥६॥	न चिन्तयन्ति तव हानिलाभञ्च । लिप्लिम्पन्ति स्वार्थवशात् ॥६॥
तू भी चतुरा गुरु का प्यारा । उन सँग रह् गुरु चरन समाय ॥७॥	गुरुप्रिय: दक्ष: त्वमपि । वस तै: सह संभूय लीनं गुरुचरणयो: ॥७॥
उनको भी इस भाँति भलाई । तेरी भक्ति न थकती जाय ॥८॥	ईदृशं तेषामपि हितम् । न शिथिला भवेत् तव भक्ति: ॥८॥
जो बेमुख गुरु भक्ति नाम से । कोई तरह क़ाबू नहिं पाय ॥९॥	ये सन्ति विरुद्धा: गुरुभक्तिनाम्न: । न वशंवदा: केनापि उपायेन ॥९॥
तौ जुक्ती से दीन बिधी से । छोड़ चलो सँग दोष न ताय ॥१०॥	युक्त्या नम्रतया च तदा । परित्यज सङ्गं न दोष अस्मिन् ॥१०॥
जो सन्मुख गुरु भक्ति नाम से । होयँ कदाचित् मेल मिलाय ॥११॥	ये सन्ति श्रद्धावान् गुरुभक्तिनाम प्रति । कुर्यु: मेलनं सम्भवत: ॥११॥
राधास्वामी कहत बनाई । बहुरि बहुरि तू भक्ति कमाय ॥१२॥	कथयन्ति रा धा/ध: स्व आ मी दयालव: । पुन: पुन: अर्जे: भक्तिं त्वम् ॥१२॥
भक्ति न छूटे कोई जुक्ति से । नहिं तो बहु बिधि रहो पछताय ॥१३॥	न मुञ्चेत् भक्ति: केनापि प्रकारेण । करिष्यसि पश्चात्तापम् अधिकं अन्यथा ॥१३॥

सारबचन पेज 253 ॥ बचन तेरहवाँ ॥ पहिचान पूरे गुरू की और सच्चे परमार्थी की ॥ ॥ शब्द पहला ॥ गुरू सोई जो शब्द सनेही	
हिंदी	संस्कृत
गुरू सोई जो शब्द सनेही । शब्द बिना दूसर नहिं सेई ॥१॥	गुरु: सैव यो शब्दस्नेही । नान्यं सेवेत शब्दं विना ॥१॥
शब्द कमावे सो गुरु पूरा । उन चरनन की हो जा धूरा ॥२॥	करोति यो शब्दाभ्यासं पूर्णगुरु: सैव । भवेत् तेषां चरणयो: धूलि: ॥२॥
और पहिचान करो मत कोई । लक्ष अलक्ष न देखो सोई ॥३॥	मा कुर्यादन्यं अभिज्ञानम् कोऽपि । मा पश्य गुणदोषान् तथैव ॥३॥
शब्द भेद लेकर तुम उनसे । शब्द कमाओ तुम तन मन से ॥४॥	प्राप्य त्वं शब्दभेदं तस्मात् । अर्जे: शब्दं त्वं तनुमनसा च ॥४॥
॥ सार उपदेश ॥ पहिचान सच्चे परमार्थी की ॥ सोरठा ॥	
अनुरागी जो जीव, तिन प्रति अब ऐसी कहूँ । सुनो कान दे चीत, बचन कहूँ बिस्तार कर ॥५॥	ये अनुरागीजीवा: तान् प्रति कथयेयं ईदृशम् । श्रृणोतु चित्ते ध्यानं धार्य कथयामि वचनं विस्तारेण॥५॥
बिषयन से जो होय उदासा । परमारथ की जा मन आसा ॥६॥	यो भवेत् उदास: विषयेभ्य: । यस्य मनसि आशा अस्ति परमार्थस्य॥६॥
धन संतान प्रीति नहिं जाके । जक्त पदारथ चाह न ताके ॥७॥	यस्य नास्ति प्रीति: संपदासंततिभिश्च सह । नास्ति इच्छा भौतिकपदार्थानां यस्य॥७॥
तन इन्द्री आसक्त न होई । नींद भूख आलस जिन खोई ॥८॥	नासक्त: यो तनु इन्द्रियैश्च सह। निद्राक्षुधालस्या: न व्याकुलं कुर्वन्ति यम्॥८॥
बिरह बान जिन हिरदे लागा । खोजत फिरे साध गुरु जागा ॥९॥	आहत: यस्य हृदय: विरहबाणेन। अनुसन्धाति साधकं जाग्रतगुरुम् ॥९॥
साध फ़क़ीर मिले जो कोई । सेवा करे करे दिलजोई ॥१०॥	प्राप्येत् साधु: वा मिक्षु: वा यो कोऽपि। कुर्यात् सेवां कुर्यात् मानम्॥१०॥
भेष धार पाखंडी होई । साधू जान करे हित सोई ॥११॥	वेशं धृत्वा भवेत् पाषण्डी। साधुं मत्वा कुर्यात् प्रीतिं तथैव॥११॥
भेष नेष्ठा नित प्रति धारे । ले परशादी चरन पखारे ॥१२॥	नित्यप्रतिं कुर्यात् श्रद्धां वेषधारीं प्रति। प्रसादं गृहीत्वा प्रक्षालयेत् चरणौ॥१२॥
ऐसी करनी जा की देखें । आप आय सतगुरु तिस मेलें ॥१३॥	ईदृशम् आचारणं पश्येत् यस्य। मिलन्ति सद्गुरु: स्वयमागत्य तम्॥१३॥
सतगुरु बचन सुने जब काना । उमँगे हिरदा प्रेम समाना ॥१४॥	यदा श्रूयात् सद्गुरुवचनं ध्यानेन। उल्लसति हृदय: समाविशति प्रेम च॥१४॥
सतगुरु से जब प्रीति लगावे ।	यदा कुर्यात् प्रीतिं सद्गुरुणा सह।

दया मेहर उनकी कुछ पावे ॥१५॥	प्राप्येत् तस्य दयां आशीर्वृष्टिञ्च किञ्चिद्॥१५॥
॥ विधि दर्शन की ॥	
नित प्रति दर्शन परसन करे । रूप अनूप चित्त में धरे ॥१६॥	कुर्यात् नित्यं दर्शनं स्पर्शनञ्च। धारयेत् अद्भुतं रुपं हृदये॥१६॥
चरनामृत परशादी लेवे । मान मनी तज तन मन देवे ॥१७॥	गृह्णीयात् चरणामृतं च प्रसादञ्च। त्यक्त्वा अहं समर्पणं कुर्यात् तनुमनसो:॥१७॥
॥ बिधि सेवा की ॥	
सेवा कर तन मन धन अरपे । सत्तपुरुष सम सतगुरु थरपें ॥१८॥	समर्पयेत् तनुमनधनानि कृत्वा सेवाम्। स्वीकुर्यात् सद्गुरुं सत्तपुरुषेव॥१८॥
॥ प्रथम तन की सेवा ॥	
आरत सेवा नित ही करे । काम क्रोध मद चित से हरे ॥१९॥	नित्यं कुर्यात् आरतिं च सेवां च । अपसारयेत् चित्तात् कामक्रोधमदा:॥१९॥
चरन दबावे पंखा फेरे । चक्की पीसे पानी भरे ॥२०॥	संवहेत् चरणौ वीजयेत् वीजनम् । पिष्यात् चक्रिकया भरेत् जलं च॥२०॥
मोरी धो झाड़ू को धावे । खोद खदाना मिट्टी लावे ॥२१॥	स्वच्छं कृत्वा नालीं धावेत् निर्धूली कर्तुं मार्जन्या । आनयेत् मृत्तिकां उत्खन्य गर्तम्॥२१॥
हाथ धुला दातन करवावे । काट पेड़ से दातन लावे ॥२२॥	प्रक्षाल्य हस्तौ कारयेत् दन्तधावनम् । छित्वा वृक्षं आनयेत् दन्तधावनम् ॥२२॥
बटना मल अशनान करावे । अंग पोंछ धोती पहिनावे ॥२३॥	उद्वर्तनान्तरं कारयेत स्नानम् । मार्जयेत् अङ्गानि परिधापयेत् धौतवस्त्रम् च॥२३॥
धोती धोय अँगोछा धोवे । कंघा करे बाल-बल खोवे ॥२४॥	प्रक्षाल्य धौतवस्त्रं क्षालयेत् अङ्गोक्षम् । कङ्कतिकं कृत्वा केशग्रन्थीन् अपसारयेत् ॥२४॥
बस्त्र पहिनावे तिलक लगावे । करे रसोई भोग धरावे ॥२५॥	परिधापयेत् वस्त्रं मस्तके योजयेत् तिलकम्। कुर्यात् महानसकार्यं धारयेत् नैवेद्यम् ॥२५॥
जल अचवावे, हुक़्क़ा भरे । पलँग बिछावे, बिनती करे ॥२६॥	जलाचमनं कारयेत् पूरयेत् धूम्रपानसाधनम्। प्रसारयेत् पर्यङ्कम् याचनां कुर्यात् च॥२६॥
पीकदान ले पीक करावे । फिर सब पीक आप पी जावे ॥२७॥	गृहीत्वा ताम्बूलष्ठीवनपात्रं कारयेत् ताम्बूलष्ठीवनम् । अनन्तरं पानं कुर्यात् तस्य ताम्बूलष्ठीवनस्य स्वयम्॥२७॥
नाना बिधि की सेवा करे । नीच ऊँच जो जो आ पड़े ॥२८॥	कुर्यात् सेवां अनेकविधिभि: । लभेत उच्चनिम्नां यां सेवाम्॥२८॥
कोई टहल में आर न लावे । जो गुरु कहें सो कार कमावे ॥२६॥	मा भवेत् काऽऽपि लज्जा सेवायाम् । कथयेत् गुरुः यं कुर्यात् तत् कार्यम्॥२९॥
॥ दूसरे धन की सेवा ॥	
धन की सेवा यह है भाई । गुरु सेवा में खर्च कराई ॥३०॥	भ्राता इयमस्ति धनस्य सेवा । व्ययं कुर्यात् गुरुसेवायाम्॥३०॥
गुरु नहिं भूखा तेरे धन का ।	न क्षुधित: गुरुः तव धनस्य ।

उन पै धन है भक्ति नाम का ॥३१॥	तं समीप धनमस्ति भक्तिनाम्न:॥३१॥
पर तेरा उपकार करावें । भूखे प्यासे को दिलवावें ॥३२॥	परं कारयन्ति तवोपकारं स: । दापयन्ति क्षुधितान् पिपासार्तान् च ॥३२॥
उनकी मेहर मुफ़्त तू पावे । जो उनको परसन्न करावे ॥३३॥	तेषां आशीर्वृष्टिं त्वं निर्मूल्यम् प्राप्नोषि। य: प्रसन्नं करोति तम् ॥३३॥
उनका खुश होना है भारी । सत्तपुरुष निज किरपा धारी ॥३४॥	तेषां प्रसन्नता अस्ति असाधारणम् । स्वकृपां कृतवन्त: सत्तपुरुष:॥३४॥
॥ तीसरे मन और बुद्धि की सेवा ॥ मनसः बद्धिश्च सेवा	
दर्शन करे बचन पुनि सुने । फिर सुन सुन नित मन में गुनें ॥३५॥	कुर्यात् दर्शनं श्रूयात् वचनं पुनः । श्रावं श्रावं पुन: विचारयेत् मनसि नित्यम्॥३५॥
गुन गुन छाँट लेय उन सारा । सार धार तिस करे अहारा ॥३६॥	विचार्य विचार्य चययेत् सारं तस्य । गृहीत्वा सारं तस्य रचयेत् स्व भावान् ॥३६॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई । जग भौ लाज अब गई नसाई ॥३७॥	भ्राता पुष्ट: भूत: तै: भावै: । नष्टौ अधुना जगतः भयं लज्जा च॥३७॥
गुरुभक्ती जानो इश्क़ गुरू का । मन में धसा सुरत में पक्का ॥३८॥	जानीयात् गुरुभक्तिं गुरोः प्रेम । प्रविष्टः मनसि दृढ आत्मनि॥३८॥
पक पक घट में गाड़ा थाना । थान गाड़ अब हुआ दिवाना ॥३६॥	संपच्य संपच्य रचितं स्थानं घटे । विरच्य स्थानं जातः प्रमत्त इदानीम्॥३९॥
गुरु का रूप लगे अस प्यारा । कामिन पति मीना जल धारा ॥४०॥	प्रतीयते ईदृशं प्रियं गुरुस्वरूपम् । स्त्रियै पतिः मत्स्याय जलं यथा॥४०॥
सतसँग करना ऐसा चहिये । सतसँग का फल येही सही है ॥४१॥	कुर्यात् ईदृशं सत्सङ्गम् । उचितमस्ति सत्सङ्गस्य इदमेव फलम्॥४१॥
॥ दोहा ॥	
जब सतगुरु परसन्न होय, देयँ नाम का दान । दीन होय हिरदे धरे, करे नाम पहिचान ॥४२॥	यदा प्रीयते सद्गुरुः ददाति नामदानम् । धारयेत् हृदये भूत्वा दीनं कुर्यात् नाम्नः अभिज्ञानम् ॥४२॥
॥ चौथे सुरत और निरत की सेवा यानी अन्तर अभ्यास ॥	
अन्तरमुख बैठे एकान्त । अभ्यास करे पावे मन शान्त ॥४३॥	अन्तर्मुखं भूत्वा तिष्ठेत् एकान्ते । कुर्यादभ्यासं प्राप्नुयात् शान्तिं मनस:॥४३॥
दो दल उलट गगन को धावे । मगन होय और नाद बजावें ॥४४॥	धावेत् गगनं उल्लुण्ट्य षष्ठचक्रम् । लीन: भवेद् श्रूयात् नादञ्च॥४४॥
जोति देख फिर देखे सूर । चन्द्र निहारे पावे नूर ॥४५॥	दृष्ट्वा ज्योतिं पश्येत् सूर्यम् । अवलोकयेत् चन्द्रं प्राप्नुयात् प्रकाशम्॥४५॥
सत्तलोक पहुँचे और बसे । सुन सुन धुन तब सूरत हँसे ॥४६॥	प्राप्नुत्यात् सतलोकपदं वसेत् च । श्रावं श्रावं ध्वनिं तदा विहसति आत्मा॥४६॥

तब सतगुरु की जानी महिमा । जिन प्रताप बाजी धुन बीना ॥४७॥	तदा अजानीत् सद्गुरुमहिमाम् । यस्य प्रतापेन अनदत् अहितुण्डवाद्यस्यध्वनि: ॥४७॥
अलख अगम और मिला अनामी । अब कहूँ धन धन राधास्वामी ॥४८॥	प्राप्तवान् अलखागमपदं अनामीपदञ्च । सम्प्रति कथयामि धन्यः धन्यः रा धा/ध: स्व आ मीदयालवः॥४८॥

सारबचन पेज 259 ॥ शब्द दूसरा ॥ घर आग लगावे सखी	
हिंदी	संस्कृत
घर आग लगावे सखी । सोइ सीतल समुँद समावे ॥१॥	सखि प्रज्वालयति अग्निं गृहे यो । स एव समाविशति शैत्यसमुद्रे ॥१॥
जड़ चेतन की गाँठ खुलानी । बुन्दा सिंध मिलावे ॥२॥	भनक्ति ग्रन्थि: चेतनाचेतनयो: । मेलयति बिन्दुं सिन्धुना सह ॥२॥
सुरत शब्द की क्यारी सींचे । फल और फूल खिलावे ॥३॥	सिञ्चति केदारिकां सुरतशब्दस्य । विकासयति फलं च पुष्पञ्च ॥३॥
गगन मंडल का ताला खोले । लाल जवाहिर पावे ॥४॥	उद्घाटयति तालकं गगनमण्डलस्य । प्राप्नोति विविधानि रत्नानि ॥४॥
सुन्नशिखर का मन्दिर झाँके । अद्भुत रूप दिखावे ॥५॥	निरूपयति मन्दिरं सुन्नशिखरस्य । पश्यति अद्भुतं स्वरूपम् ॥५॥
मानसरोवर निरमल धारा । ता बिच पैठ अन्हावे ॥६॥	निर्मलधारा मानसरोवरस्य । तस्य मध्ये प्रविश्य करोति स्नानम् ॥६॥
हंसन साथ हाथ फल लेवे । धृग धृग जक्त सुनावे ॥७॥	हंसै: सह गृह्णाति फलं प्रकटरूपेण । धृग् धृग् जगत् इति श्रावयति ॥७॥
महासुन्न का नाका तोड़े । भँवरगुफा ढिंग जावे ॥८॥	त्रोटयति महासुन्नपदस्य द्वारम् । गच्छति भँवरगुहां निकषा ॥८॥
सत्तनाम पद परस पुराना । अलख अगम को धावे ॥९॥	पुरातनं सत्तनामपदं संस्पृश्य । धावति अलखपदं अगमपदं च प्रति ॥९॥
राधास्वामी सतगुरु पावे । तब घर अपने आवे ॥१०॥	प्राप्नोति रा धा/ध: स्व आ मी सद्गुरुम् । तदा आगच्छति स्वगृहम् ॥१०॥

सारबचन वचन पेज 260 ॥ शब्द तीसरा ॥ गुरु चेला ब्योहार जगत में	
हिन्दी	संस्कृत
गुरु चेला ब्योहार जगत में । झूठा बर्त रहा ॥ १ ॥	जगति गुरुशिष्ययोः वर्तनम् । प्रचलति अनृतम् ॥१॥
कासे कहूँ खोज नहिं काहू । धोखे धारे बहा ॥ २ ॥	कं कथयामि न कोऽपि करोति तथ्यान्वेषणम् । प्रवहन्ति प्रवञ्चनायाः धारायाम् ॥ २ ॥
गुरु तो लोभ प्रतिष्ठा चाहत । शिष स्वारथ सँग आन बँधा ॥ ३ ॥	गुरुः तु वर्तते लोभप्रतिष्ठायाञ्च । शिष्य आबद्धः स्वार्थेन सह ॥ ३ ॥
सच्चा मारग सुरत शब्द का । सो अब गुप्त भया ॥ ४ ॥	सुरतशब्दस्य मार्गः सत्यमार्गः । गुप्तं जातं सोऽधुना ॥ ४ ॥
गुरु चेला पाखंडी कपटी । चौरासी में दोऊ गया ॥ ५ ॥	गुरुशिष्यौ पाषण्डकपटयुक्तौ । द्वौ गतौ चतुरशीत्याम् ॥ ५ ॥
शब्द सरूपी शब्द अभ्यासी । अस गुरु मिले तो पार हुआ ॥ ६ ॥	शब्दस्वरूपवान् शब्दाभ्यासी च । ईदृशः प्राप्तः गुरुः यदा पारं गतः तदा ॥ ६ ॥
सुरतवन्त अनुरागी सच्चा । ऐसा चेला नाम कहा ॥ ७ ॥	सुरतवान् च अनुरागी च सत्यनिष्ठश्च । ईदृशः भवति शिष्यस्य रूपम् ॥ ७ ॥
गुरु भी दुर्लभ चेला दुर्लभ । कहीं मौज से मेल मिला ॥ ८ ॥	गुरुरपि दुर्लभः शिष्योऽपि दुर्लभः । प्रभो इच्छया मिलति मेलः कुत्रापि ॥ ८ ॥
शब्द सुरत बिन जो गुरु होई । ताको छोड़ो पाप कटा ॥ ९ ॥	शब्दसुरतं विना भवति यो गुरुः । त्यज तं गतः कलहः ॥ ९ ॥
राधास्वामी यों कह गाई। बूझ बचन तब काज सरा ॥१०॥	एवमुक्त्वा राधास्वामीदयालवः अगायन् । अवबोध वचनं पूर्णं भविष्यति कार्यं तदा ॥ १० ॥

सारबचन पेज 261 ॥ शब्द चौथा ॥ सतगुरु खोजो री प्यारी	
हिंदी	संस्कृत
सतगुरु खोजो री प्यारी । जगत में दुर्लभ रतन यही ॥१॥	अयि प्रिया अन्वेष्टव्यं सद्गुरुम् । इदमेव दुर्लभं रत्नम् जगति ॥१॥
जिन पर मेहर दया सतगुरु की । उनको दरस दई ॥२॥	सद्गुरो: आशीर्वृष्टि: येषु । तान् दतवान् दर्शनम् ॥२॥
दरस पाय सतलोक सिधारी । सत्त नाम पद कीन्ह सही ॥३॥	प्राप्य दर्शनं प्राप्तं सत्तलोकम् । प्राप्यात् सत्तनामपदम् ॥३॥
सही नाम पाया सतगुरु से । बिन सतगुरु सब जीव बही ॥४॥	प्राप्त: सत्यनाम सद्गुरो: । सद्गुरुं विना प्रवहन्ति सर्वेजीवा: ॥४॥
जीव पड़े चौरासी भरमें । खान पान मद मान लई ॥५॥	भ्रमन्ति जीवा: चतुरशीत्याम् । खादनेपाने च मदमाने च व्यस्ता: ॥५॥
मान मनीं का रोग पसरिया । बड़े बने जिन मार सही ॥६॥	प्रसारित: रोग: मानप्रतिष्ठायाश्च । बृहत्तरे पदप्रतिष्ठायाञ्च सहते ताडनं पीटनञ्च ॥६॥
छोटा रहे चित्त से अन्तर । शब्द माहिं तव सुरत गई ॥७॥	दीनाधीने च चित्तात् घटात् च । आत्मा रमते शब्दे तदा ॥७॥
शब्द बिना सारा जग अंधा । बिन सतगुरु सब भर्ममई ॥८॥	इदमन्धतमं सर्वं जगत् शब्दं विना । सद्गुरुं विना सर्वे भ्रमयुक्ता: ॥८॥
शब्द भेद और शब्द कमाई । जिन जिन कीन्हीं सार लई ॥९॥	शब्दरहस्यं शब्दाभ्यासञ्च । कृतं येन येन गृहीतं सारं तेन तेन ॥९॥
शब्दरता सतगुरु पहिचानो । हम यह पूरा पता दई ॥१०॥	अभिजानातु शब्दे लीनं सद्गुरुम् । प्रदत्त: पूर्णसंकेत: अस्माभि: ॥१०॥
खोलो आँख निकट ही देखो । अब क्या खोलूँ खोल कही ॥११॥	उन्मीलतु चक्षुषी पश्य सन्निकटम् । किमोद्घाटयामि अधुना उदित: स्पष्टत: ॥११॥
आगे भाग तुम्हारा प्यारी । नहिं परखो तो जून रही ॥१२॥	अग्रे तव भाग्यं प्रिया । नाभिजानासि चेत्तर्हि भ्रमे योनिषु ॥१२॥
कहना था सोई कह डाला । राधास्वामी ख़ूब कही ॥१३॥	कथनीयं यदासीत् कथितम् सैव । रा धा/ध: स्व आ मी दयालव: बहु उदितवन्त: ॥१३॥

सारबचन पेज 263 ॥ बचन चौदहवाँ ॥ चितावनी - भाग पहला ॥ ॥ शब्द पहला ॥ धुन से सुरत भई न्यारी रे	
हिंदी	संस्कृत
धुन से सुरत भई न्यारी रे । मन से बँधी कर यारी रे ॥१॥	अयि पृथग् जाता आत्मा ध्वनेः । अयि बद्धः मनसा मित्रतां कृत्वा ॥१॥
भौजाल फँसी झख मारी रे । घर छूटा फिरे उजाड़ी रे ॥२॥	अयि बद्धः भवपाशे कृता दुर्गतिः । अयि अमुञ्चत् गृहं भ्रमति अचेतनजगति ॥२॥
गुरु ज्ञान नहीं चित धारी रे । बिष भोगे बिषय बिकारी रे ॥३॥	अयि न धृतं गुरुज्ञानं चित्ते । अयि भुङ्क्ते विषं निन्द्यं विषयविकारान् च ॥३॥
सिर भार उठावत भारी रे । जम दंड सहे सरकारी रे ॥४॥	अयि धारयति बहुभारं शिरसि । अयि सहते कालस्य न्याय्यं दण्डम् ॥४॥
दुख बिपता बहुत सहारी रे । अब सतगुरु कहत पुकारी रे ॥५॥	अयि असहत बहुदुखं विपत्तिञ्च । अयि कथयति सद्गुरुः आह्वानं कृत्य अधुना ॥५॥
सुन मान बचन मेरा प्यारी रे । घट उलटो लख उजियारी रे ॥६॥	अयि प्रिया श्रृणु अनुपालय च मम वचनम् । अयि उल्लुण्ट्य घटे पश्य प्रकाशम् ॥६॥
शब्दा रस पियो अपारी रे । चढ़ खोलो गगन किवाड़ी रे ॥७॥	अयि पिब शब्दरसं अपारम् । अयि उद्घाटय द्वारं आरुह्य गगनम् ॥७॥
गुरु बिन नहिं और अधारी रे । राधास्वामी काज सुधारी रे ॥८॥	अयि नान्यः आधारः गुरुं विना । अयि पूर्णं करिष्यन्ति कार्यं रा धा/धः स्व आ मी दयालवः ॥८॥

सारबचन पेज 264 ॥ शब्द दूसरा ॥ सुरत तू कौन कहाँ से आई	
हिंदी	संस्कृत
सुरत तू कौन कहाँ से आई ॥टेक॥	कः त्वं आत्मा(सुरतः) कुत्रतः आगतवान् च ॥टेक॥
जगत जाल यह मन रच राखा । क्यों या में भरमाई ॥१॥	मनः रचितवान् जगज्जालमिदम् । कथं भ्रमित अस्मिन् ॥१॥
पुरुष अंस तू सतपुर बासी । फाँसी काल लगाई ॥२॥	त्वं पुरुषांश: सतपुरवासी च । पाशे: बद्धः कालेन ॥२॥
सतगुरु दया साध की संगत । उलट चलो घर पाई ॥३॥	सद्गुरोः दया साधजनस्य संगतिश्च । गच्छ उल्लुण्ट्य प्राप्यते गृहम् ॥३॥
अनहद शब्द सुनो घट भीतर । राधास्वामी कहत बुझाई ॥४॥	श्रृणु अनाहतशब्दं घटे । कथयन्ति रा धा/ध: स्व आ मी दयालवः प्रबोध्य ॥४॥

सारबचन पेज 264 ॥ शब्द तीसरा ॥ झँझरिया झाँको बिरह उमँगाय	
हिंदी	संस्कृत
झँझरिया झाँको बिरह उमँगाय ॥टेक॥	ईक्षस्व षष्ठचक्रस्य छिद्रे विरहं क्षुत्वा ॥टेक॥
मन इन्द्री घर बास बिगाना । या में रहो अलसाय ॥१॥	मनसः इन्द्रियानाञ्च गृहे वासं परकीयम् । करोषि आलस्यमस्मिन् ॥१॥
पूरे सतगुरु मर्म लखावें । भर्म देव छुटकाय ॥२॥	ज्ञापयति रहस्यं पूर्णसद्गुरुः । मोचयति भ्रमम् ॥२॥
अब के दाव पड़ा तेरा सजनी । फिर औसर नहिं पाय ॥३॥	अयि सखि प्राप्तः अनुकूलसमयः त्वया अधुना । पुनः न प्राप्स्यसि अवसरम् ॥३॥
तिल को पेल तेल अब काढ़ो । लो घट जोति जगाय ॥४॥	विमथ्य षष्ठचक्रं निष्कासये: रमणीयं सारम् । जागृहि ज्योतिं घटे ॥४॥
राधास्वामी कहा बुझाई । एक ठिकाना गाय ॥५॥	उदितवन्तः रा धा/ध: स्व आ मी दयालवः अवबुध्य । अगायत् प्रथमस्थानम् ॥५॥

सारबचन पेज 265 ॥ शब्द चौथा ॥ करोरी कोइ सतसँग आज बनाय	
हिन्दी	संस्कृत
करोरी कोइ सतसँग आज बनाय ॥ टेक ॥	अयि कुर्यात् सत्संगं कोऽपि अद्यावधानेन ॥ टेक ॥
नर देही तुम दुर्लभ पाई । अस औसर फिर मिले न आय ॥ १ ॥	प्राप्तः त्वया दुर्लभः नरदेहः । ईदृग् अवसरः न प्राप्तः भवति पुन :॥ १ ॥
तिरिया सुत धन धाम बड़ाई । यह सुख फिर दुखमूल दिखाय ॥ २ ॥	स्त्रीसुतधनधामप्रशंसाः। सुखोऽयं दर्शयति दुःखमूलं पुनः॥ २ ॥
या से बचो गहो गुरु सरना । सतसँग में तुम बैठो जाय ॥ ३ ॥	दूरं भव एभ्यः गच्छतु गुरुशरणम् । गत्वा सत्संगे तिष्ठ त्वम् ॥ ३ ॥
यह सब खेल रैन का सुपना । मैं तुमको अब दिया जगाय ॥ ४ ॥	इयं सर्वा खेला रात्रिस्वप्नवत् । अचेतयत् मया त्वमधुना ॥ ४ ॥
झूठी काया झूठी माया । झूठा मन जो रहा लुभाय ॥ ५ ॥	अनृतदेह अनृता माया च। अनृतं मनः यः मोहयति॥ ५ ॥
सतसँग सच्चा सतगुरु सच्चा । नाम सचाई क्या कहूँ गाय ॥ ६ ॥	सत्संगः सत्यम् सद्गुरुः सत्यम् । किं गायेयं नाम्नः सत्यताम्॥ ६ ॥
मान बचन मेरा तू सजनी । जन्म मरन तेरा छुट जाय ॥ ७ ॥	अयि प्रिया स्वीकरोतु मम वचनम् । तव जन्म मृत्युश्च मुञ्चेः॥ ७ ॥
नभ चढ़ चलो शब्द में पेलो । राधास्वामी कहत बुझाय ॥ ८ ॥	अधिरोहतु नभसि संविशतु शब्दे च । वदन्ति राधास्वामीदयालवः प्रबोध्य॥ ८ ॥

सारबचन पेज 267 ॥ शब्द पाँचवाँ ॥ सुरत तू क्यों न सुने धुन नाम	
हिन्दी	संस्कृत
सुरत तू क्यों न सुने धुन नाम ॥ टेक ॥	अयि आत्मा (सुरतः) कथं न श्रृणोषि शब्दस्य ध्वनिं त्वम्॥टेक॥
भूलभुलइयाँ आन फँसानी क्या समझा आराम । भला तू समझ चेत चल धाम ॥ १ ॥	बद्धीभूत: आगत्य जगतः चक्रे किं ज्ञातं विश्रामम् । शुभं भवेत् यत्त्वं प्रबुध्य गच्छ स्वधाम्नि॥१॥
मन इन्द्री सँग भोग बिलासा । यह जमराय बिछाया दाम ॥ २ ॥	मनसा इन्द्रियैश्च साकं भोगः विलासश्च । कालेन प्रसारितः पाशमिदम्॥२॥
इनसे निकर भाग अब प्यारी । सतगुरु मर्म लखावें ताम ॥ ३ ॥	सम्प्रति प्रिया त्वम् एभ्यः निर्गच्छ धाव च । सद्गुरु: बोधयति सर्वं रहस्यं त्वाम् ॥३॥
अब की बार पड़ो गुरु सरना । फिर न बने अस काम ॥४॥	गच्छ गुरुशरणम साम्प्रतम् । न सिद्धं भविष्यति एतद् कार्यं पुनः॥४॥
यहाँ तो चार दिवस रहे बासा । फिर भटको चौरासी ग्राम ॥ ५ ॥	अत्र तु निवासः चतुर्दिवसपर्यन्तम् । पुन: भ्रंशिष्यसे चतुरशीतियोनिषु॥५॥
ता ते बचन हमारा मानो । तजो मोह और काम ॥ ६ ॥	अतएव मनुष्व अस्माकं वचनम् । त्यज मोहं कामनां च॥६॥
मन बौरा यह कहा न माने । लगा भोग रस खाम ॥ ७ ॥	हतकः मनः न मनुते वचनमिदम् । संलग्नः तुच्छभोगानां रसे॥७॥
जीव निबल क्या करे बिचारा । जब लग राधास्वामी करें न सहाम ॥८॥	किं कुर्यात् वराकः दुर्बल: जीव: । यावत्पर्यन्तं रा धा/ध: स्व आ मीदयालवः न भवन्ति सहायका:॥८॥

सारबचन पेज 267 ॥ शब्द छठवाँ ॥ जाग चल सूरत सोई बहुत	
हिन्दी	संस्कृत
जाग चल सूरत सोई बहुत । काहे को पूँजी अपनी खोत ॥ १ ॥	जागृया आत्मा (सुरतः) बहु अशेथा: । कथं नश्यसि स्व चैतन्यम् ॥ १ ॥
पकड़ ले सतगुरु की तू ओट नाम गह दूर करो सब खोट ॥ २ ॥	गृह्णीयाः सद्गुरोः आश्रय: त्वया । गृहीत्वा नाम दूरं कुरु सर्वे दोषाः ॥ २ ॥
काल अब मारे छिन छिन चोट । शब्द सँग डार कर्म की पोट ॥ ३ ॥	इदानीं काल: करोति आघातं प्रतिक्षणम् । शब्देन सह क्षिप पोटलिकां कर्मणाम्॥ ३ ॥
मैल मन क्यों नहिं अब तू धोत । शब्द सँग सूरत क्यों नहिं पोत ॥ ४ ॥	मनसः मालिन्यं कथं न प्रक्षालयसि त्वमधुना । कथं न युनक्षि आत्मानं शब्देन सह॥ ४ ॥
निरख ले घट में अद्भुत जोत । खोलिया राधास्वामी भक्ती सोत ॥५ ॥	पश्य अद्भुतं प्रकाशं घटे । उद्घाटितं रा धा/ध: स्व आ मीदयालवः भाण्डागारं भक्तेः॥ ५ ॥

सारबचन पेज 268 ॥ शब्द सातवाँ ॥ हित कर कहता सुन सुर्त बात	
हिंदी	संस्कृत
हित कर कहता सुन सुर्त बात । ग़ोता मत खा मूरख साथ ॥१॥	अयि आत्मा श्रृणु कथयामि हितकरवचनम् । मा निमज्ज हतकमनसा सह अहर्निशम् ॥१॥
काम सँग बहती दिन और रात । मिला तोहि भटक भटक यह गात ॥२॥	प्रवहति कामनाभिः साकं अहर्निशम् । भ्रान्तं भ्रान्तं प्राप्तं देहमिदम् ॥२॥
लगा ले नौका सतगुरु घाट । मिटा ले प्यारी जम की घात ॥३॥	युङ्क्ष्व नौकां सद्गुरुघट्टे । प्रिया नश्य यमस्य प्रहारम् ॥३॥
छोड़ दे मन से सब उतपात । रखो नहिं मन में ज़ात और पाँत ॥४॥	त्यज सर्वे उत्पाताः मनसः । मा धर जातिभेदं मनसि ॥४॥
बिघ्न यह भारी बुधि भरमात । कहूँ क्या कौन सुने मेरी तात ॥५॥	बृहद् माम् विघ्नोऽयं भ्रमति बुद्धिम् । हे तात! किं कथयेयं कः श्रृणोति मम ॥५॥
करें कोइ सतगुरु तोहि निज दात । नाम का भेद लखा धुन पात ॥६॥	विरलः कोऽपि सन्तः कुर्यात् आशीर्वृष्टिम् त्वाम् । ज्ञातं नाम्नः भेदं श्रुतं ध्वनिम् ॥६॥
कहें यह राधास्वामी अचरज बात । मिले जब सतसँग सरन समात ॥७॥	कथयन्ति रा धा/धः स्व आ मी दयालवः अद्भुतं वचनम् । प्राप्येत् यदा सत्संगः गच्छ शरणम् ॥७॥

सारबचन पेज 269 ॥ शब्द आठवाँ ॥ हे सहेली अब गुरु के मारग चलना	
हिंदी	संस्कृत
हे सहेली अब गुरु के मारग चलना । मन मारग छिन छिन तजना ॥१॥	अयि सखि अनुसर गुरुमार्गमधुना । त्यज मनमार्गं प्रतिक्षणम् ॥१॥
कामादिक भोग बिसरना । धुन सुन कर नभ पर चढ़ना ॥२॥	विस्मरेत् कामादिभोगान् । ध्वनिं श्रुत्वा अरोहेत् नभसि ॥२॥
जग भट्टी में क्यों जलना । मद मान मोह नहिं पचना ॥३॥	कथं दहेत् जगतः भट्ट्याम् । मा पचेत् मदमानमोहेषु ॥३॥
धीरे धीरे नाम रसायन जरना । भौजल से यों ही तरना ॥४॥	शनैः शनैः पचेत् नामरसायनम् । एवं पारं गच्छेत् भवसागरात् ॥४॥
राधास्वामी बचन पकड़ना । फिर जम से काहे को डरना ॥५॥	गृह्णीयात् राधास्वामीवचनम् । तदा कथं बिभीयात् यमात् ॥५॥

सारबचन पेज 269 ॥ शब्द नवाँ ॥ क्यों फिरत भुलानी जक्त में	
हिन्दी	संस्कृत
क्यों फिरत भुलानी जक्त में । दिन चार बसेरा ॥ १ ॥	कथं भ्रमसि जगतिः विस्मृता । चतुर्दिवसपर्यन्तं वास:॥ १ ॥
स्वारथ के संगी सभी । जिन तुझ को घेरा ॥ २ ॥	सर्वे स्वार्थस्य सङ्गिन:। ये परिक्रमितवन्तः त्वाम्॥ २ ॥
मात पिता सुत इस्तिरी । कोई संग न हेरा ॥ ३ ॥	पितरौ च पुत्र: च स्त्री च। न कोऽपि करोति सङ्गम्॥ ३ ॥
बिन गुरु सतगुरु कौन है । जो करे निबेड़ा ॥ ४ ॥	विना गुरुं सद्गुरुं क अस्ति । य: मोचयेत्॥ ४ ॥
नाम बिना सब जीव । करें चौरासी फेरा ॥ ५ ॥	विना नाम सर्वे जीवा:। कुर्वन्ति भ्रमणं चतुरशीत्याम्॥ ५ ॥
मन दुलहा गगना चढ़े । सज सूरत सेहरा ॥ ६ ॥	मनवर: अराहेत् गगने । अलङ्कृत्य आत्मा रूपं विवाहस्य मुकुटम्॥ ६ ॥
धुन दुलहिन को पाय कर । बसे जाय त्रिकुटी देहरा ॥ ।७॥	प्राप्य ध्वनिवधूम्। वसेत् गत्वा त्रिकुटीविश्रामस्थले॥ ७ ॥
राधास्वामी ध्यान धर । तू साँझ सवेरा ॥ ८ ॥	ध्यानं धरेत् राधास्वामीदयालूनाम्। त्वं सायंप्रातः च काले॥ ८ ॥

सारबचन पेज 270 ॥ शब्द दसवाँ ॥ सुरत तू दुखी रहे हम जानी	
हिंदी	संस्कृत
सुरत तू दुखी रहे हम जानी ॥टेक॥	आत्मा (सुरतः) त्वं दुःखी असि जानीमः वयम् ॥टेक॥
जा दिन से तुम शब्द बिसारा । मन सँग यारी ठानी ॥१॥	अविस्मरत् शब्दं त्वया यस्मात् दिवसात् । निश्चयीकृतं मित्रतां मनसा सह ॥१॥
मन मूरख तन साथ बँधानी । इन्द्री स्वाद लुभानी ॥२॥	बद्धः मूर्खमनसा सह तनुना सह च । लुब्धः इन्द्रियभोगैः सह ॥२॥
कुल परिवार सभी दुखदाई । इन सँग रहत भुलानी ॥३॥	कुलकुटुम्बं सर्वं दुःखदम् । संलीनः एभिः सह ॥३॥
तू चेतन यह जड़ सब मिथ्या । क्योंकर मेल मिलानी ॥४॥	त्वं चेतनः अचेतनं इदं सर्वं मिथ्या । कथं मेलं मिलेत् ॥४॥
ताते चेत चलो यह औसर । नहिं भरमो तुम खानी ॥५॥	अतः चैतन्यं भूत्वा चलतु अस्मिन् अवसरे । अन्यथा भ्रमिष्यसि योनिषु ॥५॥
सतसँग करो सत्तपद खोजो । सतगुरु प्रीति समानी ॥६॥	कुरू सत्संगं कुरू अन्वेषणं सत्तपदस्य । सद्गुरुणा सह प्रीतिं युङ्क्ष्व ॥६॥
नाम रतन गुरु देयँ बुझाई । उलट चढ़ो असमानी ॥७॥	गुरुणा अबोधयत् नामरूपं रत्नम् । अधिरोहतु गगने उल्लुण्ट्य ॥७॥
इतना काम करो तुम अबके । फिर आगे की सतगुरु जानी ॥८॥	कुरू एतावत् कर्म इदानीम् । अग्रे जानाति सद्गुरुः ॥८॥
राधास्वामी कहन सम्हारो । दुख छूटे सुख मिले निशानी ॥९॥	ध्यातव्यं रा धा/धः स्व आ मी दयालोः कथनम् । मुञ्चेत् दुःखं प्राप्नुयात् सुखसंकेतम् ॥९॥

सारबचन पेज 271 ॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥ सुरत तू कौन कुमति उरझानी	
हिंदी	संस्कृत
सुरत तू कौन कुमति उरझानी ॥टेक॥	आत्मा त्वं कस्यां कुमत्यां उत्पशित: ॥टेक॥
मन के साथ फिरे भरमानी । गुरु की सुने न बानी ॥१॥	भ्रमसि मनसा सह । न श्रृणोषि गुरुवचनम् ॥१॥
कनक कामिनी लागी प्यारी । रैन दिवस इन सँग लिपटानी ॥२॥	रोचसे कनकं कामिनी । अहर्निशं लिप्लिम्पसि आभ्यां सह ॥२॥
मोह जाल यह काल बिछाया । दाना डाला जीव फँसानी ॥३॥	अप्रसारयत् कालः मोहजालमिदम् । अविक्षिपन् भोगविलासा: अपाशयत् जीवञ्च ॥३॥
तू अनजान पड़ी लालच में । बहुत होय तेरी हानी ॥४॥	अज्ञः त्वं लिप्सायाम् अपतः । भवेत् तव बहुहानिः ॥४॥
मैं समझाय कहूँ अब तो से । गुरु बिन कौन बचानी ॥५॥	अवबोध्य कथयामि अहमधुना त्वाम् । कः रक्षितुं क्षमः गुरुं विना ॥५॥
गुरु से प्रीति करो जग जारो । तन मन दशा भुलानी ॥६॥	कुरु प्रीतिं गुरुणा सह प्रज्वाल जगत् च । विस्मृता जाता दशा तनुमनसोः ॥६॥
नाम रसायन गुरु से पावो । छूटे सब हैरानी ॥७॥	नामरसायनं प्राप्नुयाः गुरोः । मुञ्चेयुः कष्टानि सर्वाणि ॥७॥
फिर तू चढ़े गगन के नाके । तन से होय अलगानी ॥८॥	तदा आरुहया: गगनस्य द्वारे त्वम् । पृथग् भूत्वा तनोः ॥८॥
जम की घात बचा ले प्यारी । राधास्वामी कहत बखानी ॥९॥	प्रिया भव सुत्रातं यमाघातात् । रा धा/ध: स्व आ मी प्रिया: कथयन्ति वर्णित्वा ॥९॥

सारबचन पेज 273 ॥ शब्द बारहवाँ ॥ जग में घोर अंधेरा भारी	
हिन्दी	संस्कृत
जग में घोर अंधेरा भारी । तन में तम का भंडारा ॥१॥	गहनान्धकारः जगति । तनौ भाण्डागार: तिमिरस्य ॥१॥
स्वप्न जाग्रत दोनों देखी । भूलभुलइयाँ धर मारा ॥२॥	दृष्टा स्वप्नजाग्रतावस्था च द्वे । भ्रान्तिचक्रेण व्यथित: ॥२॥
जीव अजान भया परदेशी । देश बिसर गया निज सारा ॥३॥	अज्ञ: जीव: परदेशीय: । विस्मृत: स्वकीय: विशुद्धदेश: ॥३॥
फिरे भटकता खान खान में । जोनि जोनि बिच झख मारा ॥४॥	परिभ्रंशते जरायुजादि योनिषु । प्रतियोनिं व्यथित: भवति ॥४॥
दम दम दुखी कष्ट बहु भोगे। सुने कौन अब बहु हारा ॥५॥	आत्मना दु:खी भुनक्ति बहुदु:खम् । क: श्रूयात् सम्प्रति अतिश्रान्त: इदानीम् ॥५॥
करे पुकार कारगर नाहीं । पड़े नर्क में जम धारा ॥६॥	करोति आह्वानं नास्ति साधकम् । नरके यमधारायां पतति॥६॥
भटक भटक नरदेही पाई । इन्द्री मन मिल यहाँ मारा ॥७॥	प्राप्तवान् नरदेहं मार्गात् परिभ्रंश्य परिभ्रंश्य । इन्द्रियं मनश्च संमिल्य अत्र अताड्यताम् ॥७॥
सतगुरु संत कहें बहुतेरा । राह बतावें दस द्वारा ॥८॥	बहु कथयति सद्गुरुसंत:। वर्णयति मार्गं दशं द्वारस्य ॥८॥
बचन न माने कहन न पकड़े । फिर फिर भरमे नौ वारा ॥९॥	न मनुते वचनं न गृह्णाति कथनम् । पुनः पुनः भ्रमति नवद्वारेषु ॥९॥
फोकट धर्म पकड़ कर जूझे । बूझे न शब्द जुगत पारा ॥१०॥	स्वीकृत्य नि:सारधर्मं पीडितः भवति । नावबोधति शब्दं न युक्तिं पारकर्तुम् ॥१०॥
पानी मथे हाथ कुछ नाहीं । क्षीर मथन आलस भारा ॥११॥	मथति जलं न हस्तगतं किमपि । क्षीरं मथितुं महालस्यम् ॥११॥
जीव अभाग कहूँ मैं क्या क्या । बाहर भरमे भौजारा ॥१२॥	किं किं कथयेयं हतक: जीव: । भ्रमति बहिः भवपाशे ॥१२॥
अंतरमुख जो शब्द कमाई । ता में मन को नहिं गारा ॥१३॥	य: शब्दाभ्यासः अंर्तमुखम् । न युनक्ति मन: तस्मिन् ॥१३॥
वेद शास्त्र स्मृत और पुराना । पढ़ पढ़ सब पंडित हारा ॥१४॥	वेदशास्त्रस्मृतिपुराणानि । संपठ्य संपठ्य श्रान्ताः पण्डिताः ॥१४॥
बिन सतगुरु और बिना शब्द सुर्त । कोई न उतरे भौ पारा ॥१५॥	सद्गुरुं विना सुरतशब्दं विना च । न कोऽपि संतरति भवसागरात् पारम् ॥१५॥
यही बात भाषी मैं चुनकर । अब तो मानो गुरु प्यारा ॥१६॥	इयमेव वार्ता अभाषे चित्वा अहम् । गुरुप्रिय: मनुष्व साम्प्रतम् त्वम् ॥१६॥
राधास्वामी कहा बुझाई ।	प्रबुध्य अकथयन् रा धा/ध: स्व आ मीदयालवः ।

सुरत चढ़ाओ नभ द्वारा ॥१७॥	आरुह्यात् आत्मानं नभद्वारम् ॥१७॥

सारबचन पेज 275 ॥ शब्द तेरहवाँ ॥ चल री सुरत अब	
चल री सुरत अब गुरु के देश । जहाँ न काया कर्म कलेश ॥१॥	अयि आत्मा इदानीं चलेत् गुरुदेशं प्रति । यत्र न कायः न च कर्म न क्लेशश्च ॥१॥
तन मन इन्द्री यह परदेश। छोड़ो भेष भवन का लेश॥२॥	तनुमनइन्द्रियानाम् अयं परकीयः देश । त्यज देहस्य जगतश्च सम्बन्धम् ॥२॥
सुनो कान से गुरु संदेश । सुरत शब्द ले धाओ शेष ॥३॥	श्रूयात् कर्णाम्यां गुरुसन्देशम् । सुरत शब्देन सह धावेत् परं पदं प्रति ॥३॥
ब्रह्मा विष्णु न गौरि गनेश । जहाँ न नारद सारद शेष ॥४॥	न ब्रह्मा विष्णुश्च न गौरी गणेशश्च । यत्र न नारदशारदाशेषनागाः ॥४॥
संत सुरत जहाँ किया प्रवेश । सतगुरु दया मिला वह देश ॥५॥	यत्र प्रविष्टः संतसुरतः । सद्गुरुदययया प्राप्तः सः देशः ॥५॥
काल कर्म की गई न पेश । तोड़े दाँत और काटे नेश ॥६॥	न चलितं वशं कालकर्मणोः । अत्रोटयन् दन्ताः अकर्तयन् दंशाः च ॥६॥
सतगुरु को अब करूँ अदेश। राधास्वामी पूरे धनी धनेश ॥७॥	वन्दे सद्गुरुम् अधुना। रा धा/ध: स्व आ मीप्रभुः पूर्णधनी धनेशश्च ॥७॥

॥ बचन पन्द्रहवाँ ॥	
॥ चितावनी भाग दूसरा ॥	
सारबचन पेज 276 ॥ शब्द पहला ॥चेत चलो यह सब जंजाल	
चेत चलो यह सब जंजाल । काम न आवे कुछ धन माल ॥१॥	सावधानतया चल सर्व: आयास: अयम् । न किमपि प्रयोजनम् एतस्य धनस्य ॥१॥
गुरु चरन गहो लो नाम सम्हाल । सतसँग करो धरो अब ख़्याल ॥२॥	गुरुचरणौ गृहाण अभिरक्ष नाम च। कुरु सत्संगं धर ध्यानम् ॥२॥
काम क्रोध सँग मन पामाल । भर्म भुलाना कर्मन नाल ॥३॥	कामक्रोधाभ्यां सह पद्दलितं मनः । विस्मृतः जात: भ्रमेषु कर्मै: सह ॥ ३ ॥
कहा कहूँ यह मन का हाल । रोग सोग सँग होत बेहाल ॥४॥	किं कथयेयं मनसः दशाम् इमाम् । व्यथितः भवति रोगेण शोकेन च सह ॥४॥
जीव गिरासे जम और काल । देखत जग में यह दुख साल ॥५॥	यमकालौ गिरतः जीवम् । पश्यति जगति इदं दुःखं कष्टञ्च ॥५॥
तौ भी चेत न पकड़े ढाल । छिन छिन मारे काल कराल ॥६॥	तथापि न गृह्णाति प्रहाररोधकं चैतन्यीभूय । प्रतिक्षणं हन्ति करालकाल: ॥६॥
राधास्वामी गुरु जब होयँ दयाल । चरन शरन दे करें निहाल ॥७॥	यदा भवेत् रा धा/ध: स्व आ मी गुरुः दयालुः । दत्वा चरणशरणं कुर्यात प्रसन्नम् ॥७॥

सारबचन पेज 277 ॥ शब्द दूसरा ॥ लाज जग काज बिगाड़ा री	
हिन्दी	संस्कृत
लाज जग काज बिगाड़ा री। मोह जग फंदा डारा री ॥ १ ॥	अयि जगतः लज्जा अविकारयत् कार्यम्। अयि जगतः मोहेन पाशे बद्धः॥ १ ॥
कुटँब की यारी ख़्वारी री। काल सँग ब्याही क्वारी री ॥ २ ॥	अयि कुटुम्बेन सह मित्रता त्रुटिः। अयि विवाहितः कन्या कालेन सह॥ २ ॥
कर्म ने फाँसी डारी री। करे जम हाँसी भारी री ॥ ३ ॥	अयि अपाशयत् कर्म। अयि बहु हसति यमः॥ ३ ॥
मरन की सुद्धि बिसारी री । देह अब लागी प्यारी री ॥ ४ ॥	अयि विस्मृतं मरणम्। अयि प्रियः प्रतीयते देहः साम्प्रतम्॥ ४ ॥
मान में खप गई सारी री। पोट सिर भारी धारी री ॥ ५ ॥	अयि विनष्टाः सर्वा अहंकारे। अयि शिरसि धृता बृहद्पोटलिका॥ ५ ॥
जीत कर बाज़ी हारी री। चाह जग की नहिं मारी री ॥ ६ ॥	अयि जित्वा पराजितः पुरुस्कारः। अयि न त्यक्ताः जगद्वासनाः॥ ६ ॥
राधास्वामी कहत पुकारी री। करो कोइ जतन बिचारी री ॥ ७ ॥	अयि राधास्वामी दयालवः कथयन्ति आहवानं कृत्य । अयि विचार्य कोऽपि उपायं कुरु॥ ७ ॥
गुरू सँग करो सुधारी री। नाम रस पियो अपारी री ॥ ८ ॥	अयि कुरु अनुकूलं गुरुणा सह। अयि पिब अपारं नामरसम्॥ ८ ॥

सारबचन पेज 278 ॥ शब्द तीसरा ॥ मत देख पराये औगुन	
हिंदी	संस्कृत
मत देख पराये औगुन । क्यों पाप बढावे दिन दिन ॥१॥	मा पश्य परावगुणान् । कथं वर्धसे पापं प्रतिदिनम् ॥१॥
पर जीव सतावे खिन खिन । छोड़ अपने औगुन गिन गिन ॥२॥	पीडयसि परजीवं प्रतिक्षणम् । त्यज स्वावगुणान् विगणय्य विगणय्य ॥२॥
मक्खी सम मत कर भिन भिन । नहिं खावे चोट तू छिन छिन ॥३॥	मक्षिका समं मा कुरु गुञ्जनं पुनर्पुनः । अन्यथा चुटितं भविष्यसि प्रतिपलम् ॥३॥
देखा कर सब के तू गुन । सुख मिले बहुत तोहि पुन पुन ॥४॥	पश्येः सर्वेषां गुणान् त्वम् । प्राप्स्यसि बहुसुखं त्वं पुनर्पुनः ॥४॥
मैं कहूँ तोहि अब गुन गुन । तू मान बचन मेरा सुन सुन ॥५॥	अहं वदामि विचार्य विचार्य त्वाम् । श्रावं श्रावं मनुष्व मम वचनं त्वम् ॥५॥
गति गाई मैं यह हंसन । यों बर्ण सुनाई संतन ॥६॥	अगायम् अहम् इयं दशा हंसानाम् । एवं वर्णयित्वा संतजनाः अश्रावयन् ॥६॥
अब कान धरो इन बचनन । नहिं रोवोगे सिर धुन धुन ॥७॥	सम्प्रति श्रृणु इमान् वचनान् । अन्यथा रोदिष्यसि शिरः ताडं ताडम् ॥७॥
यह बात कही मैं चुन चुन । कर राधास्वामी चरन अस्पर्सन ॥८॥	उदिता मया इयं वार्ता चित्वा चित्वा । रा धा/धः स्व आ मीचरणौ संस्पृशय ॥८॥

सारबचन पेज 279 ॥ शब्द चौथा ॥ मुसाफ़िर रहना तुम हुशियार	
हिंदी	संस्कृत
मुसाफ़िर रहना तुम हुशियार । ठगों ने आन बिछाया जाल ॥१॥	पथिक: भव त्वं सचेत: । वञ्चकाः आगत्य प्रसारितं जालम् ॥१॥
अकेले मत जाना इस राह । गुरू बिन नहिं होगा निरबाह ॥२॥	मा गच्छ एकाकी मार्गे अस्मिन् । गुरुं विना मा भूयात् निर्वाहम् ॥२॥
जमा सब लेंगे तेरी छीन । करेंगे तुझको अपना दीन ॥३॥	तव सर्वं सम्पत्तिं बलात् ग्रहीष्यन्ति । स्व अधीनं करिष्यन्ति त्वाम् ॥३॥
ठगों ने रोका सब संसार । गुरू बिन पड़ गई सब पर धाड़ ॥४॥	वञ्चका अरुन्धन् सर्वं संसारम् । गुरुं विना अलुण्ठन् सर्वे ॥४॥
मान लो कहना मेरा यार । संग इन तजना पकड़ किनार ॥५॥	मित्रं मनुष्व मम कथनम् । त्यज एषां संगतिं पृथग्भूत्वा ॥५॥
गुरू बिन और न कोइ रखवार । कहूँ मैं तुमसे बारम्बार ॥६॥	नान्यः कोऽपि संरक्षकः गुरुं विना । कथयामि त्वां पुनर्पुन अहम् ॥६॥
होयगी मंजिल तेरी पार । गुरू से करले दृढ़ कर प्यार ॥७॥	पूर्णं भविष्यति तव लक्ष्यम् । कुरु दृढप्रीतिं गुरुणा सह ॥७॥
गुरू के चरन पकड़ यह सार । इन्द्री भोग भुलावत झाड़ ॥८॥	गृहाण गुरुचरणौ सारोऽयम् । इन्द्रियभोगाः विस्मारयन्ति सर्वान्॥८॥
यही हैं ठगिया करत ठगार । कहें राधास्वामी तोहि पुकार ॥९॥	इमे एव वञ्चकाः कुर्वन्ति वञ्चनं च । कथयन्ति रा धा/धः स्व आ मी दयालवः त्वाम् आहवानं कृत्य ॥९॥
सरन में आ जा लेउ सम्हार । नाम संग होजा होत उधार ॥१०॥	आगच्छ शरणं करोमि रक्षणम् । भव नाम्ना साकं भवेत् उद्धारः ॥१०॥

सारबचन पेज 280 ॥ शब्द पाँचवा ॥ मित्र तेरा कोई नहीं सँगियन में	
हिंदी	संस्कृत
मित्र तेरा कोई नहीं सँगियन में । पड़ा क्यों सोवे इन ठगियन में ॥१॥	न कोऽपि तव मित्रं सखिषु । कथं शेषे एषु वञ्चकेषु ॥१॥
चेत कर प्रीति करो सतसँग में । गुरू फिर रंग दें नाम अरँग में ॥२॥	सावधानतया कुरु प्रीतिं सत्सङ्गे । तदा रिङ्गेत् गुरुः निर्मलनाम्नि ॥२॥
धन संपति तेरे काम न आवे । छोड़ चलो यह छिन में ॥३॥	न किमपि प्रयोजनं धनसम्पत्तेः तव कृते । परित्यज्य इदं चल क्षणे च ॥३॥
आगे रैन अँधेरी भारी । काज करो कुछ दिन में ॥४॥	अग्रे रात्रिः अति गहना । कुरु किञ्चित् कार्यं यावत्पर्यन्त दिनं तावत् ॥४॥
यह देही फिर हाथ न आवे । फिरो चौरासी बन में ॥५॥	न पुनः प्राप्स्यति देहोऽयम् । परिभ्रंशेत चतुरशीत्यां योनिषु ॥५॥
गुरु सेवा कर गुरू रिझाओ । आओ तुम इस ढँग में ॥६॥	कृत्वा गुरुसेवां प्रसन्नं कुर्यात् गुरुम् । स्वीकुरु अमुं विधिम् ॥६॥
गुरु बिन तेरा और न कोई । धार बचन यह मन में ॥७॥	नान्यः कोऽपि गुरुं विना तव । मनसि धरेत् वचनमिदम् ॥७॥
जक्त जाल में फँसो न भाई । निस दिन रहो भजन में ॥८॥	भ्राता मा बद्धीभव जगद्पाशे । रमस्व भजने प्रतिदिनम् ॥८॥
साध गुरू का कहना मानो । रहो उदास जगत में ॥९॥	मनुष्व वचनं साधगुरोः । भव उदासीनं जगति ॥९॥
छल बल छोड़ो और चतुराई । क्यों तुम पड़ो कुगति में ॥१०॥	त्यज छलं च बलं च चातुर्यञ्च । कथं पते: कुगत्यां त्वम् ॥१०॥
सुमिरन करो गुरू को सेवो । चल रहो आज गगन में ॥११॥	कुरु स्मरणं सेवस्व गुरुञ्च । गगने चल अधुना ॥११॥
कल की ख़बर काल फिर लेगा । वहाँ तुम जलो अगिन में ॥१२॥	भविष्ये कालः करिष्यति दण्डात्मिकां कार्यवाहीम् । तत्र त्वं ज्वले: नरकाग्नौ ॥१२॥
अबही समझ देर मत करियो । ना जानूँ क्या होय इस पन में ॥१३॥	साम्प्रतं अवबोध मा कुरु विलम्बम् । न जानामि किं भवेत् अस्याम् अवस्थायाम् ॥१३॥
यों समझाय कहें राधास्वामी । मानो एक बचन में ॥१४॥	एवं प्रबोध्य कथयन्ति रा धा/ध: स्व आ मी दयालव:। मनुष्व एकस्यां वाचि ॥१४॥

सारबचन पेज 281-282 ॥ शब्द छठवाँ ॥ मौत से डरत रहो दिन रात	
हिंदी	संस्कृत
मौत से डरत रहो दिन रात ॥टेक॥	बिभीयात् मरणात् अहर्निशम् ॥टेक॥
एक दिन भारी भीड़ पड़ेगी । जम खूँदेंगे धर धर लात ॥१॥	एकदिने बहुविपत्ति: भविष्यति । यमदूताः परिपेक्ष्यन्ति पादाभ्याम् ॥१॥
वा दिन की तुम याद बिसारी । अब भोगन में रहो भुलात ॥२॥	विस्मृतं स्मरणं तस्य दिवसस्य । सम्प्रति विस्मरसि भोगेषु ॥२॥
एक दिन काठी बने तुम्हारी । चार कहरवा लादे जात ॥३॥	एकदिने भविष्यति शवशय्या तव । चत्वार: कहारा: भारं वक्ष्यन्ति ॥३॥
भाई बंद कुटँब परिवारा । सो सब पीछे भागे जात ॥४॥	भ्राताबन्धुश्च कुटुम्बपरिवारश्च । सर्वे ते अनुधाविष्यन्ति ॥४॥
आगे मरघट जाय उतारा । तिरिया रोये बिखेरे लाट ॥५॥	अग्रे श्मशाने अवतारिष्यन्ति । पत्नी केशानवकीर्य रोदिष्यति ॥५॥
वहाँ जमपुर में नर्क निवासा । यहाँ अग्नी में फूँके जात ॥६॥	तत्र नरकवासः यमपुरे । अत्र अग्नौ ज्वालनम् ॥६॥
दोनों दीन बिगाड़े अपने । अब नहिं सुनता सतगुरु बात ॥७॥	द्वौ स्वलोकपरलोकौ अविकारयताम् । साम्प्रतं न श्रृणोति सद्गुरुवचनम् ॥७॥
वा दिन बहु पछतावा होगा । अब तुम करते अपनी घात ॥८॥	तस्मिन् दिने भविष्यति बहुपश्चात्तापः । इदानी करोषि त्वं स्वहानिम् ॥८॥
ज्वानी गई बृद्धता आई । अब कै दिन का इनका साथ ॥९॥	गता युवावस्था आगता वृद्धावस्था । अधुना कति दिवसपर्यन्तं वास: एभि: सह ॥९॥
चेत करो मानो यह कहना । गुरु के चरन झुकाओ माथ ॥१०॥	चैतन्यं भव मनुष्व वचनम् इदम् । नतमस्तकं भव गुरु चरणयो: ॥१०॥
राधास्वामी कहत सुनाई । अब तुमको बहु बिधि समझात ॥११॥	कथयन्ति रा धा/ध: स्व आ मी दयालवः श्रावयित्वा । अधुना बोधयामि त्वां अनेकविधिभिः ॥११॥

सारबचन पेज 283 ॥ शब्द सातवाँ ॥ बंधे तुम गाढ़े बंधन आन	
हिंदी	संस्कृत
बंधे तुम गाढ़े बंधन आन ॥टेक॥	त्वं प्रगाढ़बन्धनेषु बन्धितवान् आगत्य ॥टेक॥
पहले बंधन पड़ा देह का । दूसरा तिरिया जान ॥१॥	प्रथमं बन्धनं देहस्य । द्वितीयं जानीहि स्त्रीम् ॥१॥
तीसर बंधन पुत्र बिचारो । चौथा नाती मान ॥२॥	तृतीयं बन्धनं विद्धि पुत्रम् । चतुर्थ पौत्रं मनुष्व ॥२॥
नाती के कहिं नाती होवे । फिर कहो कौन ठिकान ॥३॥	पौत्रस्य कदापि पौत्रं जन्यात् । तदा का स्थितिः भवेत् ॥३॥
धन संपति और हाट हवेली । यह बंधन क्या करूँ बखान ॥४॥	धनसम्पत्तिविपणिभवनानि । किं वर्णयेयं इदं बन्धनम् ॥४॥
चौलड़ पचलड़ सतलड़ रसरी । बाँध लिया अब बहु बिधि तान ॥५॥	चतस्रपञ्चसप्तमालाभिश्च निर्मितं रज्जुम् । अबध्नात् दृढतया इदानीम् ॥५॥
कैसे छूटन होय तुम्हारा । गहरे खूँटे गड़े निदान ॥६॥	कथं भवेत् तव मुक्तिः । गाढकीलकाः अनिवेशयन् निदाने ॥६॥
मरे बिना तुम छूटो नाहीं । जीते जी तुम सुनो न कान ॥७॥	न मुञ्चे: मृत्युं विना त्वम्। जीविते न श्रृणोषि अवधानेन ॥७॥
जगत लाज और कुल मरजादा । यह बंधन सब ऊपर ठान ॥८॥	जगत: लज्जां कुलमर्यादाञ्च । अवबोध सर्वोपरि इदं बन्धनम् ॥८॥
लीक पुरानी कभी न छोड़ो । जो छोडो तो जग की हान ॥९॥	न कदापि त्यज पुरापरम्पराम् । त्यजेः चेत्तर्हि जगतः हानि: ॥९॥
क्या क्या कहूँ बिपति मैं तुम्हरी । भटको जोनी भूत मसान ॥१०॥	किं किं कथयेयं विपत्तिं तव । मार्गात् परिभ्रंशिष्यसे भूतपिशाचेव ॥१०॥
तुम तो जगत सत्य कर पकड़ा । क्योंकर पावो नाम निशान ॥११॥	जगत् सत्यम् इति गृहीतं त्वया । कथं प्राप्नुयाः परिचयम् ॥११॥
बेड़ी तौक़ हथकड़ी बाँधे । काल कोठरी कष्ट समान ॥१२॥	निगडेन कण्ठस्यलोहमयगोलेन श्रृङ्खलया च बद्धः । कष्टं कालकोष्ठे वासेव ॥१२॥
काल दुष्ट तुम बहु बिधि बाँधा । तुम खुश होके रहो ग़लतान ॥१३॥	दुष्टकाल: अबध्नात् त्वां बहुविधिना । प्रसन्नीभूय त्वमसि भ्रमे ॥१३॥
ऐसे मूरख दुख सुख जाना । क्या कहूँ अजब सुजान ॥१४॥	ईदृशः मूर्खाः दुखं सुखमिति अनुभवन्ति । किं कथयेयं अद्भुतचतुराः ॥१४॥
शरम करो कुछ लज्जा ठानो । नहिं जमपुर का भोगो डान ॥१५॥	कुरु लज्जां धर त्रपां च किंचित् । अन्यथा भुङ्क्तात् यमपुरस्य दण्डम् ॥१५॥
राधास्वामी सरन गहो अब । तौ कुछ पाओ उनसे दान ॥१६॥	अधुना गृहाण रा धा/ध: स्व आ मीशरणम् । तदा प्राप्नुयाः किंचित् दानं तेभ्य: ॥१६॥

सारबचन पेज 285 ॥ बचन १५ ॥ शब्द आठवाँ ॥ चेत चल जगत से बौरे	
हिंदी	संस्कृत
चेत चल जगत से बौरे । कपट तज गहो गुरू सरना ॥१॥	हतकः चल चैतन्यीभूय जगतः । गृहाण गुरुशरणं त्यक्त्वा कपटम् ॥१॥
फिरे ग़ाफ़िल तू मदमाता । अन्त सिर पीट कर मरना ॥२॥	भ्रमसि विस्मृतः मदोन्मत्तश्च । अन्ते मरणं शिरः ताडनेन ॥२॥
लगे नहिं हाथ कुछ तेरे । कुटँब के साथ क्यों पिलना ॥३॥	न किमपि हस्तगतं भवेत् तव। कथं पचसि कुटम्बेन सह ॥३॥
चार दिन के सँगाती यह । बटाऊ फिर नहीं मिलना ॥४॥	चतुर्दिनानां मित्राणि एतानि । न पुन: मेलिष्यति पथिकः ॥४॥
रहो हुशियार जग ठग से । बचा पूँजी कमर कसना ॥५॥	चैतन्यं भव वञ्चकजगतः । संपत्तिं संरक्ष्य कटिं सुस्थरी कुरु ॥५॥
मुसाफ़िर हो गुरू सँग लो । नाम शमशेर कर गहना ॥६॥	पथिक असि कुरु गुरुसङ्गम् । गृहाण कृपाणं हस्ते ॥६॥
सुरत को तान गगना में । पकड़ धुन बान घट रहना ॥७॥	तनु आत्मानं गगने । बाणध्वनिं गृहीत्वा घटे वस ॥७॥
काल की घात से बचकर । गहो राधास्वामी के चरना ॥८॥	कालस्य आघातात् संरक्ष्य । रा धा/ध: स्व आ मीचरणौ गृहाण ॥८॥

सारबचन पेज 286 ॥ शब्द नवाँ ॥ तजो मन यह दुख सुख का धाम	
हिंदी	संस्कृत
तजो मन यह दुख सुख का धाम । लगो तुम चढ़ कर अब सतनाम ॥१॥	मनः त्यजतु दुःखसुखयो धाममिदम् । अधुना त्वमधिरुह्य युङ्क्ष्व सतनामपदम् ॥१॥
दिना चार तन संग बसेरा । फिर छूटे यह ग्राम ॥२॥	चतुर्दिवसपर्यन्तं वासं देहेन सह । तदनन्तरं मुच्यते देहोऽयम् ॥२॥
धन दारा सुत नाती कहियन । यह नहिं आवें काम ॥३॥	धनस्त्रीसुतपौत्राः उच्यन्ते । न प्रयोजनं एतेषाम् ॥३॥
स्वाँस दुधारा नित ही जारी । एक दिन खाली चाम ॥४॥	श्वासोच्छ्वासौ चलतः नित्यम् । एकदा रिक्तं भवति देहः ॥४॥
मशक समान जान यह देही । बहती आठो जाम ॥५॥	जलपूर्णचर्मस्यूतवत् जानीहि शरीरमिदम् । चलति अष्टप्रहरेषु ॥५॥
तू अचेत ग़ाफ़िल हो रहता । सुने न मूल कलाम ॥६॥	अचेतः त्वं प्रमत्तोऽसि । न श्रृणोषि मूलशब्दम् ॥६॥
माया नारि पड़ी तेरे पीछे । क्यों नहिं छोड़त काम ॥७॥	मायानारी अनुसरति त्वाम् । कथं न त्यजसि कामम् ॥७॥
बिन गुरु दया छुटो नहिं या से । भजो गुरू का नाम ॥८॥	गुरोः दयां विना न मुञ्चनम् एतस्याः । भज् गुरुनाम ॥८॥
गुरु का ध्यान धरो हिरदे में । मन को राखो थाम ॥९॥	धर गुरोः ध्यानं हृदये । रुन्द्धि मनः ॥९॥
वे दयाल तेरी दया बिचारें । दम दम करें सहाम ॥१०॥	सः दयालुः कुर्यात् दयां त्वयि । अत्युत्साहेन कुर्यात् दयाम् ॥१०॥
छोड़ भोग क्यों रोग बिसावे । या में नहिं आराम ॥११॥	त्यज भोगान् कथं क्रीणासि रोगान् । न विश्रामः अस्मिन्॥११॥
गुरु का कहना मान पियारे । तौ पावे बिसराम ॥१२॥	प्रियः मनुष्व गुरुकथनम्। प्राप्स्यसि विश्रामं तदा॥१२॥
दुख तेरा सब दूर करेंगे । देंगे अचल मुक़ाम ॥१३॥	हरिष्यन्ति तव सर्वं दुःखम् । दास्यन्ति अचलपदम् ॥१३॥
राधास्वामी कहत सुनाई । खोज करो निज नाम ॥१४॥	कथयन्ति रा धा/धः स्व आ मीदयालवः श्रावयित्वा । अनवेषय निजनाम ॥१४॥

सारबचन पेज 286 ॥ शब्द दसवाँ ॥ देखो सब जग जात बहा	
हिंदी	संस्कृत
देखो सब जग जात बहा ॥टेक॥	पश्य प्रवहति सर्वजगत् ॥टेक॥
देख देख मैं गति या जग की । बार बार यों बर्ण कहा ॥१॥	संपश्य संपश्य गतिं अस्य जगत अहम् । पुन: पुनः वर्णयित्वा अकथमेवम् ॥१॥
चारों जुग चौरासी भोगी । अति दुख पाया नर्क रहा ॥२॥	चतुर्युगेषु चतुरशीतियोनिषु वासम् । अति दुःखमाप्तम् नरकं जातम् ॥२॥
जन्म जन्म दुख पावत बीते । एक छिन कहीं न चैन लहा ॥३॥	दुःखे व्यतीतानि अनेकानि जन्मानि । न आप्तं सुखं कुत्रापि क्षणं यावत् ॥३॥
पाप पुन्य बस बिपता भोगी । नहिं सतगुरु का चरन गहा ॥४॥	पापपुण्यवशात् भुक्ता विपदा । न गृहीतौ सद्गुरुचरणौ ॥४॥
अब यह देह मिली किरपा से । करो भक्ति जो कर्म दहा ॥५॥	कृपया प्राप्तः देहोऽयम् । कुरु भक्तिं कर्मणां विनाशाय ॥५॥
अब की चूक माफ़ नहिं होगी । नाना बिधि के कष्ट सहा ॥६॥	अस्मिन् समये कृतात्रुटि: न क्षम्या । अनेककष्टान् सहिष्यसे ॥६॥
ग़फ़लत छोड़ भुलाओ जग को । नाम अमल अब घोट पियो ॥७॥	त्यज प्रमादं विस्मर जगत् । नाम्नः मदं संघट्य पिब ॥७॥
मन से डरो करो गुरु सेवा । राधास्वामी भेद दिया ॥८॥	बिभीहि मनसः कुरु गुरुसेवाम् । भेदं दत्तवन्तः रा धा/ध: स्व आ मीदयालवः ॥८॥

सारबचन पेज 288 ॥ शब्द ग्यारहवाँ ॥ कोई मानो रे कहन हमारी	
हिंदी	संस्कृत
कोई मानो रे कहन हमारी ॥टेक॥	अयि कश्चित् मन्वीत नः कथनम् ॥टेक॥
जो जो कहूँ सुनो चित देकर । गों की कहूँ तुम्हारी ॥१॥	यो यो कथयामि श्रूयादवधानेन । कथयामि तव हिते ॥१॥
जग के बीच बँधे तुम ऐसे । जैसे सुवना नलनी धारी ॥२॥	जगति बद्धः त्वमीदृक् । यथा शुकं गृहणाय वशीकरणयन्त्रम् ॥२॥
मरकट सम तुम हुए अनाड़ी । मुट्ठी दीन फँसा री ॥३॥	वानरवत् त्वं मूर्खः जातः । मुष्टिं दत्वा बद्धीभूतः ॥३॥
और मीना जिह्वारस माती । काँटा जिगर छिदा री ॥४॥	मत्स्यश्च यथा जिह्वारसाय उन्मत्ता । कण्टकं विध्यते हृदयम् ॥४॥
गज सम मूरख हुए इस बन में । झूठी हथिनी देख बँधा री ॥५॥	गजवत् मूर्खः संजातः संसारेऽस्मिन् । मिथ्या हस्तिनीं पश्य बद्धीभूतः ॥५॥
क्या क्या कहूँ काल अन्याई । बहु बिधि तुमको फाँस लिया री ॥६॥	किं किं कथयेयं निष्ठुरकालः । अपाशयत् बहुविधिना त्वाम् ॥६॥
तुम अनजान मर्म नहिं जाना । छल बल कर इन फाँस लिया री ॥७॥	त्वमज्ञः न ज्ञातं मर्मम् । बन्धितवान् कालः छलेन बलेन च ॥७॥
छूटन की बिधि नेक न मानो । क्योंकर छूटन होय तुम्हारी ॥८॥	न मनुषे मुक्ते उपायम् । कथं भवेत् तव मुक्तिः ॥८॥
सतगुरु संत हुए उपकारी । उनका संग करो न सम्हारी ॥९॥	सद्गुरुः सन्त उपकर्ता । कथं न करोषि तेषां सङ्गं सावधानतया ॥९॥
वह दयाल अस जुगत लखावें । कर दें तुम छुटकारी ॥१०॥	सः दयालुः ईदृशीं युक्तिं अवबोधयन्ति । मोचयन्ति त्वाम् ॥१०॥
पाँच तत्त गुन तीन जेवरी । काटें पल पल बंधन भारी ॥११॥	पंचतत्त्वानि त्रयगुणानां रज्जुश्च । कृन्तन्ति बृहद्बन्धनं प्रतिपलम्॥११॥
उनकी संगत करो भर्म तज । पाओ तुम गति न्यारी ॥१२॥	परित्यज्य भयं कुरु तेषां सङ्गम् प्राप्स्यसि त्वं कालातीतां गतिम्॥१२॥
जक्त जाल सब धोखा जानो । मन मूरख सँग कीन्हीं यारी ॥१३॥	मनुष्व सर्वं जगज्जालं प्रपञ्चम् मूर्खेण मनसा साकं कृता मित्रता ॥१३॥
इसका संग तजो तुम छिन छिन । नहिं यह लेगा जान तुम्हारी ॥१४॥	त्यज अस्य सङ्गं प्रतिक्षणम् अन्यथा हनिष्यति त्वाम् ॥१४॥
अपने घर से दूर पड़ोगे । चौरासी के धक्के खा री ॥१५॥	निज धाम्नः दूरं भविष्यसि धक्कायन्ते चतुरशीति योनिषु॥१५॥
बड़ी कुगति में जाय पड़ोगे । वहाँ से तुमको कौन निकारी ॥१६॥	प्राप्स्यसि अतिदुर्दशाम् । तत्रतः कः निष्कासयिष्यति त्वाम्॥१६॥

ता ते अब ही कहना मानो । राधास्वामी कहत बिचारी ॥१७॥	अतः मनुष्व कथनं अधुना कथयन्ति राधास्वामी दयालवः विचार्य॥१७॥

सारबचन पेज 290 ॥ शब्द बारहवाँ ॥ अटक तू क्यों रहा जग में	
हिंदी	संस्कृत
अटक तू क्यों रहा जग में । भटक में क्या मिले भाई ॥१॥	विरमसि कथं त्वं जगति । मार्गात् परिभ्रंशने किं प्राप्स्यसि भ्राता ॥१॥
खटक तू धार अब मन में । खोज सतसंग में जाई ॥२॥	स्व मनसि धर कल्याणस्य चिन्ताम् इदानीम् । कुरु अन्वेषणं गत्वा सत्सङ्गे ॥२॥
बिरह की आग जब भड़के । दूर कर जक्त की काई ॥३॥	यदा उद्दीपयेत् विरहाग्निः । दूरं कुरु जगतः मालिन्यम् ॥३॥
लगा ले लगन सतगुरु से । मिले फिर शब्द लौ लाई ॥४॥	धर आसक्तिः सद्गुरौ । प्राप्येत् शब्दः तन्मयीभूय पुनः ॥४॥
छुटेगा जन्म और मरना । अमर पद जाय तू पाई ॥५॥	मोक्ष्यतः जन्म च मृत्युश्च । अमरपदं प्राप्स्यसि त्वं गत्वा ॥५॥
भाग तेरा जगे सोता । नाम और धाम मिल जाई ॥६॥	तव शयानः भाग्यं जागृयाः । प्राप्येत् नाम च धाम च ॥६॥
कहूँ क्या काल जग मारा । जीव सब घेर भरमाई ॥७॥	किं कथयेयं कालः अहन् जगत् । परिक्राम्य सर्वान् जीवान् भ्रमितवन्तः ॥७॥
नहीं कोइ मौत से डरता । ख़ौफ़ जम का नहीं लाई ॥८॥	न कोऽपि बिभेति मरणात् । न करोति यमस्य भयम् ॥८॥
पड़े सब मोह की फाँसी । लोभ ने मार धर खाई ॥९॥	सर्वे अपाशयन् मोहे । लोभेन हत्वा खादितः ॥९॥
चेत कहो होय अब कैसे । गुरू के संग नहिं धाई ॥१०॥	कथयतु कथं भवेत् चैतन्यम् इदानीम् । नानुसरति गुरुम् ॥१०॥
काम और क्रोध बिच बिच में । जीव से भाड़ झोंकवाई ॥११॥	काले काले कामक्रोधौ । व्यर्थं कार्यं कारयतः जीवेन ॥११॥
गुरू बिन कोइ नहीं अपना । जाल यह कौन तुड़वाई ॥१२॥	गुरुं विना न कोऽपि स्वकीयः । कः त्रोटयिष्यति पाशम् इमम् ॥१२॥
कुटुम्ब परिवार मतलब का । बिना धन पास नहिं आई ॥१३॥	स्वार्थस्य कुटुम्बपरिवारश्च । धनं विना नागच्छन्ति समीपम् ॥१३॥
कहाँ लग कहूँ इस मन को । उन्हीं से माँस नुचवाई ॥१४॥	कियत् पर्यन्तं कथयेयं इदं मनः । उल्लुञ्चयन्ते आमिषं तैः ॥१४॥
गुरू और साध कहे बहु बिधि । कहन उनकी न पतियाई ॥१५॥	कथयन्ति गुरुसाधगुरुश्च बहुविधिना । तेषु वचनेषु न विश्वसन्ति ॥१५॥
मेहर बिन क्या कोई माने । कही राधास्वामी यह गाई ॥१६॥	कृपां विना कथं कोऽपि मनुते । कथितवन्तः रा धा/धः स्व आ मी दयालवः गीत्वा अयम् ॥१६॥

सारबचन पेज 292 ॥ शब्द तेरहवाँ ॥ मिली नर देह यह तुमको	
हिंदी	संस्कृत
मिली नर देह यह तुमको । बनाओ काज कुछ अपना ॥१॥	अयं नरदेह: प्राप्त: त्वया । स्व किमपि प्रयोजनं सिद्धं कुरु ॥१॥
पचो मत आय इस जग में । जानियो रैन का सुपना ॥२॥	खिन्न: मा भव आगत्य अस्मिन् जगति । जानीहि रात्रिस्वप्नवत् ॥२॥
देह और ग्रेह सब झूठा । भर्म में काहे को खपना ॥३॥	देहः गृहं च सर्वं मिथ्या । कथं व्यथितः भ्रमे ॥३॥
जीव सब लोभ में भूले । काल से कोइ नहीं बचना ॥४॥	सर्वे जीवा: विस्मृताः लोभे । न कोऽपि रक्षितः कालात् ॥४॥
तृष्णा अग्नि जग जारा । पड़ा सब जीव को तपना ॥५॥	जगत् ज्वलति तृष्णा अग्नौ । सर्वे जीवाः तपन्ति ॥५॥
नहीं कोइ राह बचने की । जलें सब नर्क की अगिना ॥६॥	न कोऽपि मार्ग: रक्षितुम् । सर्वे ज्वलन्ति नरकाग्नौ ॥६॥
जलेंगे आग में निस दिन । बहुरि भोगें जनम मरना ॥७॥	ज्वलिष्यन्ति अग्नौ प्रतिदिनम् । पुन: भोक्ष्यन्ति जन्ममृत्युं च ॥७॥
भटकते वे फिरें खानी । नहीं कुछ ठीक उन लगना ॥८॥	परिभ्रंशन्ते ते चतुर्योनिषु । न किमपि अनुकूल: तेषाम् ॥८॥
कहूँ क्या दुक्ख वह भोगें । कहन में आ नहीं सकना ॥९॥	किं कथयेयं भुञ्जन्ति दु:खं ते । वर्णयितुं न शक्यते ॥९॥
दया कर संत और सतगुरु । बतावें नाम का जपना ॥१०॥	दयां धार्य संत सद्गुरुश्च । निर्दिशन्ति नाम्न: स्मरणम् ॥१०॥
न माने जुक्ति यह उनकी । सुरत और शब्द का गहना ॥११॥	न मनुते अयं तेषाम् इयं युक्तिम् । सुरतशब्दयोश्च ग्रहणम् ॥११॥
बिना सतगुरु बिना करनी । छुटे नहिं खान का फिरना ॥१२॥	सद्गुरं विना कर्म विना च । न मुच्यते चतुर्योनिषु परिभ्रंशनम् ॥१२॥
कहाँ लग में कहूँ उनको । कोई नहिं मानता कहना ॥१३॥	कियत् पर्यन्तं वदेयम् अहं तान् । न कोऽपि मनुते कथनम् ॥१३॥
हुए मनमुख फिरें दुख में । बचन गुरु का नहीं माना ॥१४॥	जाताः मनोन्मुखा: भ्रमन्ति दु:खे च । न स्वीकृतं गुरुवचनम् ॥१४॥
पुजावें आपको जग में । गुरू की सेव नहिं करना ॥१५॥	जगति स्वपूजां कारयन्ति । न सेवन्ते गुरुम् ॥१५॥
फ़िकर नहिं जीव का अपने । पड़ेगा नर्क में फेंकना ॥१६॥	न स्वकीय जीवस्य चिन्ता । क्षिप्यते नरके ॥१६॥
समझ कर धार लो मन में ।	संबोध्य धारयेत् मनसि ।

कहें राधास्वामी निज बचना ॥१७॥	कथयन्ति रा धा/ध: स्व आ मी दयाल्या स्व वचनम् ॥१७॥

सारबचन पेज 294 ॥ शब्द चौदहवाँ ॥ यहाँ तुम समझ सोच कर चलना	
हिंदी	संस्कृत
यहाँ तुम समझ सोच कर चलना ॥टेक॥	अत्र त्वं प्रबुध्य चलेत् ॥टेक॥
यह तो राह बड़ी अति टेढ़ी । मन के साथ न पड़ना ॥१॥	मार्गोऽयं अतिकुटिलः। मनसा सह न प्रवहेत् ॥१॥
भौजल धार बहे अति गहरी । बिन गुरु कैसे पार उतरना ॥२॥	भवसागरस्य प्रवहति अतिगहनाधारा । गुरुं विना कथं संतरेत् पारम् ॥२॥
गुरु से प्रीति करो तुम ऐसी । जस कामी कामिन सँग धरना ॥३॥	गुरुणा साकं कुरु ईदृशीं प्रीतिम् । यथा कामुकस्य कामिन्या सह ॥३॥
संग करो चेटक चित राखो । मन से गुरु के चरन पकड़ना ॥४॥	संगं कुरु चित्ते धर भयम् । मनसा गृह्णीष्व गुरुचरणौ ॥४॥
छल बल कपट छोड़ कर बरतो । गुरु के बचन समझना ॥५॥	छलबल कपटानि च त्यक्त्वा व्यवहरेत् । गुरुवचनानि संबुध्याः ॥५॥
डरते रहो काल के भय से । ख़बर नहीं कब मरना ॥६॥	बिभीयात् कालस्य भयात् । न ज्ञातं कदा मरणं भवेत ॥६॥
स्वाँसो स्वाँस होश कर बौरे । पल पल नाम सुमिरना ॥७॥	हतकः प्रतिक्षणं चैतन्यं भव । प्रतिपलं स्मरेत् नाम ॥७॥
यहाँ की ग़फ़लत बहुत सतावे । फिर आगे कुछ नहिं बन पड़ना ॥८॥	इतः कृता त्रुटिः पीडयति बहु । अग्रे पुनः न किमपि लभेत् ॥८॥
जो कुछ बने सो अभी बनाओ । फिर का कुछ न भरोसा धरना ॥९॥	यत् किमपि सम्भवं कुरु इदानीम्। अग्रे किं भवेत् मा कुरु विश्वासम् ॥९॥
जग सुख की कुछ चाह न राखो । दुख में इसके दुखी न रहना ॥१०॥	जगतः सुखस्य तृष्णां मा कुरु । अस्याः दुःखे दुःखी न भूयात् ॥१०॥
दुख की घड़ी ग़नीमत जानों । नाम गुरू का छिन छिन भजना ॥११॥	दुःखकालं जानीहि शुभं समाचारम् । स्मरेत् गुरुनाम प्रतिपलम ॥११॥
सुख में ग़ाफ़िल रहत सदा नर । मन तरंग में दम दम बहना ॥१२॥	नरः सुखी प्रमादी भवति सदा । मनसः तरंगेषु प्रवहति अत्युत्साहेन ॥१२॥
ताते चेत करो सतसंगत । दुख-सुख-नदियाँ पार उतरना ॥१३॥	अतः कुरु सत्संगं चैतन्यीभूय । संतरेत् दुःखसुखयोः नदीभ्यः ॥१३॥
अपना रूप लखो घट भीतर । फिर आगे को सूरत भरना ॥१४॥	ईक्षस्व निजरूपं घटे । पुनः अग्रे प्रवेशयेत् आत्मानम् ॥१४॥
राधास्वामी कहें बुझाई । शब्द गुरू से जाकर मिलना ॥१५॥	बोधयन्ति रा धा/धः स्व आ मी दयालवः । शब्दगुरुणा सह मेलनं कुर्यात् ॥१५॥

सारबचन पेज 296 ॥ शब्द पन्द्रहवाँ ॥ मन रे क्यों गुमान अब करना	
हिंदी	संस्कृत
मन रे क्यों गुमान अब करना ॥टेक॥	रे मनः कथं कुर्यात् दर्पमधुना
तन तो तेरा खाक मिलेगा । चौरासी जा पड़ना ॥१॥	तव तनुः तु मृत्तिकायां मेलिष्यति । पतिष्यसि चतुरशीत्याम् ॥१॥
दीन ग़रीबी चित में धरना । काम क्रोध से बचना ॥२॥	दैन्य दारिद्रयञ्च चित्ते धर । दूरी भव कामक्रोधाभ्याम ॥२॥
प्रीति प्रतीति गुरू की करना । नाम-रसायन घट में जरना ॥३॥	प्रीतिः प्रतीतिश्च कुर्या: गुरुणा साकम् । घटे पच नाम रसायनम् ॥३॥
मन मलीन के कहे न चलना । गुरु का बचन हिये बिच रखना ॥४॥	मलिन मनसा सह मा चल । हृदये धर गुरुवचनम् ॥४॥
यह मतिमन्द गहे नहिं सरना । लोभ बढ़ाय उद्र को भरना ॥५॥	तुच्छबुद्धिः इदं मनः न गृह्णाति गुरुशरणम् । पूरयति उदरम् लोभं संवर्द्धय ॥५॥
तुम मानो मत इसका कहना । इसके संग जक्त बिच गिरना ॥६॥	मा अनुसर अस्य कथनम् । अनेन सह पतिष्यति जगत: मध्ये ॥६॥
इस मूरख को समझ पकड़ना । गुरु के चरन कभी न बिसरना ॥७॥	इदं मूर्खं गृह्णीष्व प्रबुध्य । मा विस्मर्या: गुरुचरणौ कदापि ॥७॥
गुरु का रूप नैन में धरना । सुरत शब्द से नभ पर चढ़ना ॥८॥	धर गुरुस्वरूपं नेत्रयोः । सुरतशब्देन नभसि अरोहेत् ॥८॥
राधास्वामी नाम सुमिरना । जो वह कहें चित्त में धरना ॥९॥	जप रा धा/ध: स्व आ मी नाम । यो कथयेत् तं धरेत् चित्ते ॥९॥

सारबचन पेज 297 ॥ शब्द सोलहवाँ ॥ जोड़ो री कोइ सुरत नाम से	
हिंदी	संस्कृत
जोड़ो री कोइ सुरत नाम से ॥टेक॥	अयि युञ्ज्यात् कोऽपि सुरतनाम्ना ॥टेक॥
यह तन धन कुछ काम न आवे । पड़े लड़ाई जाम से ॥१॥	न किमपि प्रयोजनं अस्य तनोः धनस्य च । यमेन सह कलहे वसनम् ॥१॥
अब तो समय मिला अति सुन्दर । सीतल हो बच घाम से ॥२॥	साम्प्रतं अतिसुन्दरसमयः प्राप्तः। शीतलं भूयात् रक्ष्यात् स्वकीयं जगतः दाहात् ॥२॥
सुमिरन कर सेवा कर सतगुरु । मनहिं हटाओ काम से ॥३॥	स्मरणं कुर्यात् गुरोः सेवां च कुर्यात् । अपसरेत् मनः कामात् ॥३॥
मन इन्द्री कुछ बस कर राखो । पियो घूँट गुरु जाम से ॥४॥	मनेन्द्रियानि किञ्चित् नियन्त्रणे कुर्यात् । पेयात् चलुकं गुरोः चषकात् ॥४॥
लगे ठिकाना मिले मुक़ामा । छूटो मन के दाम से ॥५॥	लभेत अधिष्ठानं प्राप्यात् विरामस्थलम् । मुञ्चेत् मनसः पाशात् ॥५॥
भजन करो छोड़ो सब आलस । निकर चलो कलि ग्राम से ॥६॥	कुरू भजनं त्यज सर्वम् आलस्यम् । निर्गच्छ कलिग्रामात् ॥६॥
दम दम करो बेनती गुरु से । वही निकारें तने चाम से ॥७॥	आत्मना आह्वानं कुरु गुरुम् । सैव निष्कासयिष्यति देहात् ॥७॥
और उपाव न ऐसा कोई । रटन करो सुबह शाम से ॥८॥	नान्यः ईदृग् उपायः कोऽपि । कुरु स्मरणं प्रातः सायम् च ॥८॥
प्रीति लाय नित करो साध सँग । हट रहो जग के खासो आम से ॥९॥	कुरु साधपुरुषाणां सङ्गं प्रीत्या नित्यम् । अपसरेत् जगतः निकृष्ट प्रतिष्ठितेभ्यजनेभ्यश्च ॥९॥
राधास्वामी कहें सुनाई । लगो जाय सत्तनाम से ॥१०॥	कथयन्ति रा धा/धः स्व आ मी दयालवः श्रावयित्वा । युङ्क्ष्व सत्त नाम्ना ॥१०॥

सारबचन पेज 298-300 ॥ शब्द सत्रहवाँ ॥ जक्त से चेतन किस विधि होय	
हिंदी	संस्कृत
जक्त से चेतन किस विधि होय । मोह ने बाँध लिया अब मोहि ॥१॥	जगतः चैतन्यं केन विधिना भूयात् । मोहेन बद्धः मामधुना ॥१॥
बेड़ियाँ भारी पड़ती जायँ । फाँसियाँ करड़ी लागीं आय ॥२॥	शृङ्खलाः भारयुक्ताः भवन्ति । पाशाः दृढतया संलग्नाः ॥२॥
जाल अब चौड़े बिछ गये आय । चाट अब सुख की कुछ कुछ पाय ॥३॥	पृथुः जालानि प्रसारितानि इदानीम् । सम्प्रति सुखस्य आस्यादः किंचिद् प्राप्य ॥३॥
दुक्ख अब पीछे होगा आय । खबर नहिं उसकी कौन बताय ॥४॥	पश्चात्तापं भविष्यति अनन्तरम् । तस्य न ज्ञानं कः वदेत् ॥४॥
पड़ेगी भारी एक दिन भीड़ । सहेगा नाना बिधि की पीड़ ॥५॥	एकस्मिन् दिने आपद् दास्यति कष्टम्। सहिष्यते पीडां अनेकविधीनाम् ॥५॥
करेगा पछतावा जब बहुत । अभी तो सुनता नहिं दिन खोत ॥६॥	तदा करिष्यति बहु पश्चात्तापम् । साम्प्रतं न श्रृणोति नश्यति दिवसान् ॥६॥
याद नहिं लाता अपनी मौत । रात दिन ग़फ़लत में पड़ा सोत ॥७॥	न स्मरति स्व मरणम् । अहर्निशं प्रमादे शेते ॥७॥
कहे में मन के चलता बहुत । भरे है दिन भर जग का पोत ॥८॥	मनसः इच्छायां बहु चलति । सर्व दिवसं यावत् लौकिक कार्येषु व्यस्तः ॥८॥
रात को सोता खाट बिछाय । होश नहिं कल को क्या हो जाय ॥९॥	रात्रौ शेते शय्यायां प्रसार्य निश्चिंतीभूय । अचेतनः न जानाति श्व किं भवेत् ॥९॥
काल ने मारा कर कर जेर । कर्म ने खूँदा धर धर पैर ॥१०॥	काल अहनत् अधः निपात्य । कर्म अपिनड् दृढपादाभ्याम् ॥१०॥
तमोगुन छाय गया घट माहिं । खबर सब भूल गया यहाँ आय ॥११॥	तमस् गुणः व्याप्तः घटे । सर्वा: वार्ता: विस्मृता: अत्रागत्य ॥११॥
संत और सतगुरु रहे चिताय । बचन उन मन में नहीं समाय ॥१२॥	संतसद्गुरुश्च चैतन्यं कुर्वन्ति । तेषां वचनानि न समाविशंति मनसि ॥१२॥
भजन और सुमिरन दिया बिसराय । प्रीति भी उन चरनन नहिं लाय ॥१३॥	भजनं स्मरणञ्च विस्मृतौ । न करोति प्रीतिं तेषां चरणयोः ॥१३॥
कहो कस छूटे जम की घात । भोग और सोग लगे दिन रात ॥१४॥	कथयेत् कथं मुञ्चेत् यमस्य आघाततः । अहर्निशं संलिप्तः विषयभोगेषु शोकेषु च ॥१४॥
गुरू बिन कौन छुड़ावे ताय । हुआ यह कैदी बहु बिधि आय ॥१५॥	गुरुं विना कः मोचयति तम् । जातोऽयं बन्दी बहुविधिभिः आगत्य ॥१५॥
बिना सतसंग और बिन नाम । न पावे कबही अपना धाम ॥१६॥	सत्संगं बिना नाम बिना च । कदापि न प्राप्स्यसि निजदेशम् ॥१६॥

कही राधास्वामी यह गति गाय । सरन ले संत की तू जाय ॥१७॥	रा धा/ध: स्व आ मी दयालवः इमां गतिं गीत्वा अकथयन् । गच्छ त्वं सन्तशरणम् ॥१७॥